इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ५ अंक १ चैत्र मास कलियुगाब्द ५११४ अप्रैल, २०१२

मार्गदर्शक :
डॉ० शिवाजी सिंह
चेतराम
इरविन खन्ना

सम्पादक :
डॉ० विद्या चन्द ठाकुर

सह सम्पादक
चेतराम गर्ग

सम्पादक मण्डल :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ०ओम प्रकाश शर्मा
प्रो० सतीश चन्द्र

टंकण एवं सज्जा :
अश्वनी कालिया

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव—नेरी, डाकघर—खगल
जिला—हमीरपुर—१७७००१ (हि०प्र०)
दूरभाष : ०१९७२—२०३०४४

मूल्यः
प्रति अंक —१५.०० रुपये
वार्षिक — ६०.०० रुपय
itihasdivakar@yahoo.com
chetramneri@gmail.com

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

विवेकानन्दामृतम्

धर्मभूमि भारत	स्वामी विवेकानन्द	३

नवसंवत्सर

नव—संवत्सर मास एवं दिवस व्यवस्था	डा० गौरीनाथ रस्तोगी	८
कुल्लू में नवसंवत्सर	ओम प्रकाश शास्त्री	११

संवीक्षण

इतिहास का पुनर्लेखन	बाबा साहेब आपटे	१४
संकल्प पाठ का विवेचनात्मक अध्ययन	डा० ओम दत्त सरोच	१७
महाराज श्री अग्र का युग तथा उनके वंशज	ओम प्रकाश 'मधुप'	२२

क्रान्तिवीर

सत्याग्रही क्रान्तिवीर शोभा राम	रूप शर्मा	२८

स्थान वृत्त

गौरवशाली उज्जययिनी	ललित शर्मा	३४

यात्रा वृत्त

किन्नर कैलाश दर्शन	बीरबल शर्मा	३९
गतिविधियां		४३

सम्पादकीय

भारत का मेरुदण्ड

नवसंवत्सर कलियुगाब्द 5114, विक्रमी सम्वत् 2069 तथा शक सम्वत् 1934 की अनन्त शुभकामनाएँ। भारतीय सनातन परम्परा में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन नव संवत्सर के पावन पर्व की राष्ट्रव्यापी मान्यता है। इस दिवस का सम्बन्ध भारतवर्ष के धर्म और अध्यात्म से जुड़ा है। भारत के धर्म और अध्यात्म के श्रेष्ठ मार्ग – **आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः** (ऋग्वेद 1/89/1) अर्थात् – हमें सब ओर से कल्याणकारी विचार प्राप्त हों, का वैदिक संदेश न केवल भारत राष्ट्र के लिए अपितु सम्पूर्ण विश्व समाज के लिए हितकर है। स्वामी विवेकानन्द ने भारत के ऋषियों के धर्म अध्यात्म के दर्शन की छाप पाश्चात्य समाज में बड़ी गहराई तक पुनः स्थापित की है।

स्वामी विवेकानन्द जी का जन्म पिता विश्वनाथ दत्त के घर, माता भुवनेश्वरी देवी की कोख से माघ कृष्ण सप्तमी, कलियुगाब्द, 4964 तदनुसार 12 जनवरी, 1863 को कोलकत्ता में हुआ। माता–पिता ने इनका नाम नरेन्द्रनाथ रखा जो स्वामी रामकृष्ण परमहंस से दिव्य ज्ञान प्राप्त करके स्वामी विवेकानन्द के नाम से सारे संसार में विख्यात हुए। 11 सितम्बर, 1893 को अमेरिका के शिकागो नगर में विश्व धर्म सम्मेलन को हिन्दू धर्म के प्रतिनिधि के रूप में सम्बोधित करते हुए स्वामी जी ने जब आरम्भ में **अमेरिकावासी बहनों और भाईयो** कहकर सम्बोधन किया तो सभी श्रोता मन्त्रमुग्ध हो गए। तत्पश्चात् उन्होंने पाश्चात्य जगत में सनातन हिन्दू धर्म की विशिष्टताओं का जो यथार्थ अभिव्यक्त किया उससे विश्व गुरु भारत की महिमा का बोध अखिल विश्व में हुआ।

स्वामी विवकोकनन्द भारत के धर्म एवं अध्यात्म की कीर्ति पताका विदेशों में फहरा कर जब जाफना के रास्ते भारत के तट पर पाम्बन नगर में पहुंचे तो वहां अपने अभिनन्दन समारोह में स्वामी जी ने कहा कि मैंने पाश्चात्य देशों में भ्रमण किया है और मेरा भिन्न–भिन्न देशों में बहुत सम्पर्क हुआ है। मुझे लगा कि प्रत्येक राष्ट्र का एक विशिष्ट आदर्श अवश्य होता है। यह आदर्श राष्ट्र जीवन का मेरुदण्ड होता है। भारत का मेरुदण्ड राजनीति नहीं है, सैन्य शक्ति भी नहीं है, व्यावसायिक अधिपत्य भी नहीं है और न यांत्रिक शक्ति ही है। **भारत का मेरुदण्ड धर्म है**। केवल धर्म ही हमारा सर्वस्व है। जितना शक्तिशाली प्रभाव धर्म एवं अध्यात्म का विश्व पर पड़ता है, उतना किसी का नहीं।

भारत के धर्म और अध्यात्म के अनुभूतिसिद्ध प्रखर मार्गदर्शक स्वामी विवेकानन्द जी का जन्म दिवस पाश्चात्य चिन्तन के आधुनिक प्रभाव प्रवाह में प्रतिवर्ष 12 जनवरी को मनाया जाता है। परन्तु वैज्ञानिक कालगणना पर आधारित भारतीय पंचांग के अनुसार स्वामी जी के जन्म दिवस का अनुष्ठान माघ मास के कृष्ण पक्ष की सप्तमी तिथि को होता है। विगत माघ मास के कृष्ण पक्ष की सप्तमी 15 जनवरी, 2012 को स्वामी जी की जयन्ती 150वें वर्ष में प्रविष्ट हो गई है। अतः स्वामी जी की जन्म सार्द्ध शताब्दी वर्ष के पावन उपलक्ष्य में इस संवत्सर के इतिहास दिवाकर के प्रत्येक अंक में स्वामी जी के अद्वितीय विचारों से सम्बन्धित सामग्री **विवेकानन्दामृतम्** स्तम्भ के अन्तर्गत सम्मिलित रहेगी।

विनीत

डॉ. विद्याचन्द ठाकुर

धर्मभूमि भारत

स्वामी विवेकानन्द

स्वामी जी ने अमेरिका प्रवास काल में उन्हें खेतड़ी (राजपूताना) के महाराज ने ५ मार्च, १८६५ को एक अभिनन्दन पत्र लिखा जिसका उत्तर स्वामी जी ने निम्नलिखित रूप में दिया है।

'जब जब धर्म की अवनति होती है और अधर्म बढ़ता है, तब तब मैं पुन: धर्म की स्थापना के लिए अवतीर्ण होता हूँ।[१]

ये शब्द पवित्र गीता में सनातन भगवान् के वाक्य हैं। यह वाक्य संसार में आध्यात्मिक शक्ति-प्रवाह के सनातन उत्थान और पतन के नियमों का मूल मन्त्रस्वरूप है।

ये परिवर्तन बारम्बार संसार में नये-नये लयों में प्रकाशित हो रहे हैं और यद्यपि अन्यान्य महान् परिवर्तनों की तरह उनके कार्यक्षेत्र में प्रत्येक क्षुद्र वस्तु के ऊपर उनका प्रभाव पड़ता है, फिर भी अनुकूल स्थान में ही उनकी कार्यशक्ति का प्रकाश अधिक पाया जाता है।

समष्टि रूप में जिस प्रकार आदिम अवस्था त्रिगुणों का साम्य-भाव है, इस साम्यावस्था के भंग होने और उसे पुन: प्राप्त करने के निमित्त होने वाले समस्त संघर्षों को ही हम प्रकृति की अभिव्यक्ति – यह विश्व – कहते हैं और आदि साम्यावस्था प्राप्त होने तक यह जगत् एवं वस्तुओं की गतिविधि इसी प्रकार चलती रहेगी – उसी प्रकार मालूम होता है कि इस पृथ्वी पर जब तक मनुष्य जाति वर्तमान रूप में रहेगी तब तक विषमता और उसकी नित्य सहचरी, साम्य लाभ की चेष्टा, दोनों ही साथ-साथ चलती रहेंगी। इसके फलस्वरूप संसार में सर्वत्र भिन्न-भिन्न जातियों, उप जातियों से लेकर व्यक्तियों तक में विशेषत्व सृष्ट होता रहेगा।

निष्पक्ष वितरण और तुलन के इस जगत् में प्रत्येक जाति मानो किसी विशेष प्रकार के शक्ति-संग्रह एवं उसके वितरण के निमित्त एक अद्‌भुत डाइनेमो है और उस जाति के पास अन्यान्य अनेक वस्तुओं के रहने पर भी वही विशेष शक्ति उस जाति के विशेष लक्षण के रूप में उद्‌भासित होती है। मनुष्य प्रकृति के किसी विशेष भाव के विशेष विकास तथा उद्दीपन होने पर उसका प्रभाव अल्पाधिक मात्रा में सभी पर होता है, परन्तु जिस जाति का वह भाव विशेष लक्षण है एवं साधारणत: जिसे केन्द्र बनाकर वह उत्पन्न हुआ है, उसी जाति के अन्तस्तल को वह सबसे अधिक आलोड़ित कर देता है। इसी कारण धर्म-जगत् में किसी आन्दोलन के उपस्थित होने पर, उसके फलस्वरूप, भारत में अवश्य ही अनेक प्रकार के महत्त्वपूर्ण परिवर्तन प्रकटित होंगे क्योंकि भारत को ही केन्द्र बनाकर बारम्बार धर्म की तरंगे उत्थित हुई हैं; क्योंकि सर्वोपरि भारत धर्म का देश

१. गीता – ४/७

है।

प्रत्येक व्यक्ति केवल उसी वस्तु को सत्य समझता है, जो उसके उद्देश्य की पूर्ति में सहायक होती है। सांसारिक भावापन्न व्यक्तियों के समक्ष वही वस्तु सत्य है, जिसके विनिमय में उन्हें अर्थ की प्राप्ति होती हो; और जिसके बदले में उन्हें धन-लाभ नहीं होता, वह उनके लिए असत्य है। जिस व्यक्ति की आकांक्षा दूसरों पर प्रभुत्व स्थापित करने की है, उसके लिए तो सत्य वही है, जिसके द्वारा उसकी यह आकांक्षा पूर्ण होती है, और शेष सब उसके लिए निरर्थक है। इसी प्रकार जो वस्तु किसी व्यक्ति की आकांक्षा-पूर्ति में सहायक नहीं होती, उस वस्तु में वह व्यक्ति किसी प्रकार का सत्य या अर्थ नहीं देख पाता।

जिन व्यक्तियों का एकमात्र लक्ष्य अपने जीवन की समस्त शक्तियों के विनिमय में कांचन, नाम-यश या अन्य किसी प्रकार के भोग-विलास का अर्जन करना है, जिनके समक्ष रणभूमिगामी सुसज्जित सेनादल ही शक्ति के विकास का एकमात्र प्रतीक है, जिनके निकट इन्द्रिय—सुख ही जीवन का एकमात्र आनन्द है, ऐसे लोगों के लिए भारत सर्वदा ही एक बड़े मरुस्थल के समान प्रतीत होगा, जहाँ की आँधी का एक झोंका ही उनकी कल्पित जीवन विकास की धारणा के लिए मानो मृत्युस्वरूप है।

किन्तु जिन व्यक्तियों की जीवन तृष्णा इन्द्रिय जगत से सुदूर स्थित अमृत सरिता के दिव्य सलिल पान से सम्पूर्णतः बुझ चुकी है, जिनकी आत्मा ने सर्प के केंचुल-त्याग की तरह काम, कांचन और यश-स्पृहा के त्रिविध बन्धनों को दूर फेंक दिया है, जिनका मन शान्ति की अत्युच्च शिखा पर पहुंच गया है और जो वहाँ से इन्द्रिय भोगों में आबद्ध तथा नीच जनोचित कलह, विषाद और द्वेष, हिंसा में रत व्यक्तियों को प्रेम तथा सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से देखते हैं, जिनके संचित पूर्व सत्कर्म के प्रभाव से आँखों के सामने से अज्ञान का आवरण लुप्त हो गया है, जिससे वे असार नाम-रूप को भेदकर प्रकृत सत्य का दर्शन करने में समर्थ हुए हैं, ऐसे व्यक्ति कहीं भी क्यों न रहें, आध्यात्मिकता की जननी एवं अनन्त खानिस्वरूप भारत उनके समक्ष भिन्न रूप में, अधिक महिमान्वित और उज्जवल भासित होगा। इस मायावी जगत् में जो एकमात्र प्रकृत सत्ता है, उसके अनुसन्धान में रत प्रत्येक व्यक्ति के लिए भारत आशा की एक प्रज्वलित शिखा है।

अधिकांश मनुष्य शक्ति को उसी समय शक्ति समझते हैं, जब वह उनके अनुभव के योग्य होकर स्थूलाकार में उनके सामने प्रकट हो जाती है। उनकी दृष्टि में समरांगण में तलवारों की झनझनाहट आदि ही परम स्पष्टतः प्रत्यक्ष शक्ति विकास मालूम होते हैं; और जो आंधी की भांति सामने से चीजों को तोड़-मरोड़कर उथल-पुथल पैदा न कर देती हो, वह उनकी दृष्टि में जीवन की अभिव्यक्ति नहीं है वरन् मृत्युस्वरूप है। इसीलिए शताब्दियों से विदेशियों द्वारा शासित एवं निश्चेष्ट, एकताहीन एवं देशभक्तिहीन भारत उनके निकट ऐसा प्रतीत होगा, मानो वह गलित अस्थि-चर्मों से ढकी हुई भूमि मात्र हो।

ऐसा कहा जाता है — योग्यतम ही जीवन संग्राम में जीवित बचता है। तब फिर प्रश्न उठता है कि साधारण धारणानुसार यह जो जाति अन्य जातियों की अपेक्षा नितान्त अयोग्य है,

दारुण जातीय दुर्भाग्यचक्र में फंस जाने पर भी उसके विनाश का कोई चिन्ह दिखायी क्यों नहीं देता? तथाकथित वीर्यशाली और कर्मपरायण जातियों की प्रजनन शक्ति जिस प्रकार एक ओर प्रतिदिन कम होती जा रही है, उसी प्रकार दूसरी ओर नैतिकविहीन (?) हिन्दुओं की वृद्धि सर्वापेक्षा अधिक हो रही है, यह किस प्रकार होता है? जो लोग एक पल में समस्तविश्व को रक्तरंजित कर सकते हैं, उसके लिए तारीफ़ की झड़ी लग सकती है; जो लोग कुछ लाख लोगों के सुख के लिए संसार के अधिकांश लोगों को भूखा मार सकते हैं, वे भी गौरवान्वित हो सकते हैं, किन्तु जो लोग अन्य लोगों का अन्न न छीनकर लाखों मनुष्यों को सुख और शान्ति प्रदान करते हैं, वे क्या किसी प्रकार का सम्मान प्राप्त करने के योग्य नहीं हैं ? शताब्दियों से दूसरों के ऊपर किसी भी प्रकार का अत्याचार न करके लाखों के भाग्य का संचालन करनेवालों के कार्य में क्या किसी प्रकार का अत्याचार न करके लाखों के भाग्य का संचालन करनेवालों के कार्य में क्या किसी प्रकार की शक्ति का विकास प्रकट नहीं होता ?

सभी प्राचीन जातियों के पौराणिक ग्रंथों में, उनके वीरों की गाथाओं में यह देखा जाता है कि उनका प्राण उनके शरीर के किसी विशेष छोटे से अंश में आबद्ध था; और जब तक उनका वह अंश अस्पर्शित रहा, तब तक वे अजेय रहे। इसी प्रकार प्रतीत होता है कि मानो प्रत्येक जाति में किसी विशेष स्थान में उसकी जीवनीशक्ति संचित रहती है; और जब तक वह स्थान अक्षुण्ण बना रहेगा, तब तक किसी प्रकार का दु:ख या विपत्ति उस जाति का विनाश नहीं कर सकती।

धर्म ही है भारत की यह जीवनीशक्ति; और जब तक हिन्दू जाति अपने पूर्वजों से प्राप्त उत्तराधिकार को नहीं भूलेगी, तब तक संसार में ऐसी कोई भी शक्ति नहीं है, जो उसका ध्वंस कर सके।

जो लोग अपने अतीत की ही ओर दृष्टि लगाये रखते हैं, आजकल सभी लोग उनकी निन्दा किया करते हैं। वे कहते हैं कि इस प्रकार निरन्तर अतीत की ओर देखते रहने के कारण ही हिन्दू जाति को नाना प्रकार के दु:ख और आपत्तियाँ भोगनी पड़ी हैं। किन्तु मेरी तो यह धारणा है कि इसका विपरीत ही सत्य है। जब तक हिन्दू जाति अपने अतीत को भूली हुई थी, तब तक वह संज्ञाहीन अवस्था में पड़ी रही, और अतीत की ओर दृष्टि जाते ही चहुं ओर पुनर्जीवन के लक्षण दिखायी दे रहे हैं। भविष्य को इसी अतीत के सांचे में ढालना होगा, अतीत ही भविष्य होगा।

अतएव हिन्दू लोग अतीत का जितना ही अध्ययन करेंगे, उनका भविष्य उतना ही उज्जवल होगा; और जो कोई इस अतीत के बारे में प्रत्येक व्यक्ति को विज्ञ करने की चेष्टा कर रहा है, वह स्वजाति का परम हितकारी है। भारत की अवनति इसलिए नहीं हुई है कि हमारे पूर्व पुरुषों के नियम एवं आचार-व्यवहार खराब थे, वरन् उसकी अवनति का कारण यह था कि उन नियमों और आचार-व्यवहारों को उनकी न्यायसंगत परिणति तक नहीं ले जाने दिया गया।

भारत का इतिहास पढ़नेवाला प्रत्येक विचारशील पाठक यह जानता है कि भारत के सामाजिक विधान प्रत्येक युग के साथ परिवर्तित हुए हैं। आरम्भ में ये नियम एक ऐसी विराट् योजना के पुंजीभूत रूप थे, जिसे क्रमश: भविष्य में फलीभूत होना था। प्राचीन भारत के ऋषिगण इतने दूरदर्शी थे कि उनकी ज्ञानराशि के महत्व को समझने में विश्व को अब भी सदियों तक प्रतीक्षा

करनी पड़ेगी; और उनके वंशधरों द्वारा इस महान् उद्देश्य को पूर्ण रूप से ग्रहण करने की यह अक्षमता ही भारत की अवनति का एकमात्र कारण है।

यह संघर्ष हमारी जाति के इतिहास के एकदम प्रारंभिक युगों में ही आरम्भ हुआ था, और समस्त श्रुतियों में वह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है। कुछ समय के लिए यह विरोध कम हो गया, जब क्षत्रियों तथा ज्ञानकाण्ड के नेता श्री कृष्ण ने समन्वय का मार्ग दिखला दिया। उसका परिणाम है गीता की शिक्षा, जो दर्शन, उदारता एवं धर्म का सारस्वतरूप है। किन्तु संघर्ष का कारण तब भी विद्यमान था, अत: उसका परिणाम अनिवार्य था।

निर्धन एवं अशिक्षित जनता पर प्रभुत्व स्थापित करने की महत्त्वाकांक्षा इन दोनों जातियों में विद्यमान थी, अत: संघर्ष पुन: भयानक हो उठा। हमें उस समय का जो कुछ थोड़ा सा साहित्य उपलब्ध है, वह प्राचीन काल के उसी प्रबल संघर्ष की क्षीण प्रतिध्वनि मात्र है। किन्तु अन्त में क्षत्रियों की विजय हुई, ज्ञान की जीत हुई, स्वाधीनता की जीत हुई; कर्मकाण्ड को नीचा देखना पड़ा और उसका अधिकांश हमेशा के लिए विदा हो गया। यह वही क्रान्ति थी, जिसे हम बौद्ध सुधारवाद के नाम से अभिहित करते हैं। धर्म की दृष्टि से यह कर्मकाण्ड के हाथों से मुक्ति का सूचक है, और राजनीति के दृष्टिकोण से यह क्षत्रियों के द्वारा पुरोहितों का पराभव सूचित करता है।

यह एक विशेष रूप से ध्यान देने योग्य बात है कि प्राचीन भारत ने जिन दो सर्वश्रेष्ठ पुरुषों को जन्म दिया था, वे दोनों ही क्षत्रिय हैं — वे थे कृष्ण और बुद्ध। और यह उससे भी अधिक ध्यान देने योग्य बात है कि इन दोनों ही देव-मानवों ने लिंग और जाति के भेद को न मानकर सबके लिए ज्ञान का द्वार उन्मुक्त कर दिया था।

बौद्ध धर्म में अद्भुत नैतिक बल विद्यमान रहने पर भी वह अतीत ध्वंसात्मक था, और उसकी अधिकांश शक्ति नकारात्मक प्रयासों में ही व्यय हो जाने के कारण उसे अपनी जन्मभूमि में ही अपना विनाश देखना पड़ा, एवं उसका जो कुछ शेष रहा, वह जिन कुसंस्कारों तथा कर्मकाण्डों के निवारण के लिए नियोजित किया गया था, उनके शतश: अधिक भयानक कुसंस्कारों और कर्मकाण्डों में फंस गया। यद्यपि आंशिक रूप में वह वैदिक पशुबलि निवारण करने में सफल हुआ, पर उसने समस्त देश को मन्दिर, प्रतिमा, यन्त्र तथा साधुओं की अस्थियों से पूर्ण कर दिया।

विशेषत:, उसके द्वारा आर्य, मंगोल एवं आदिवासियों का जो एक विचित्र मिश्रण हुआ, उससे अज्ञात रूप से कितने ही वीभत्स वामाचार-सम्प्रदायों की सृष्टि हुई। मुख्यतया इसीलिए श्री शंकाराचार्य और उनके मतानुयायी सन्यासियों को उन महान् आचार्य बुद्ध के इस विकृत रूप में परिणत उपदेशों को भारत के बाहर निकाल देना पड़ा।

इस प्रकार मनुष्य-देह धारण करने वाली में सर्वश्रेष्ठ आत्मा स्वयं भगवान् बुद्ध द्वारा परिचालित संजीवनी-शक्तिप्रवाह भी दुर्गन्धमय रोग-कीटाणुपूर्ण क्षुद्र गन्दे जलाशय में बदल गया, और भारत को भी अनेक शताब्दियों तक प्रतीक्षा करनी पड़ी, जब तक कि भगवान् शंकर और उनके कुछ समय बाद रामानुज एवं मध्वाचार्य आविर्भूत नहीं हुए।

इसी बीच में भारत के इतिहास का एक नितान्त नया अध्याय आरम्भ हो गया था। प्राचीन

ब्राह्मण और क्षत्रिय जातियां लुप्त हो गयी थीं। हिमालय तथा विन्ध्याचल की मध्यवर्ती वह आर्यभूमि, जिसने कृष्ण और बुद्ध को जन्म दिया था, जो महामना राजर्षियों तथा ब्रह्मर्षियों की क्रीड़ाभूमि रही थी, इस समय नीरव रही; और भारत प्रायद्वीप के सबसे आखिरी छोर से, भाषा तथा रूप में भिन्न जातियों की ओर से एवं प्राचीन ब्राह्मणों के वंशज कहकर गौरवानुभवन करनेवाली पीढ़ियों से विकृत बौद्ध धर्म के विरूद्ध प्रतिक्रिया आरम्भ हो गयी।

आर्यावर्त के उन ब्राह्मणों और क्षत्रियों का क्या हुआ ? उनका नाम हमेशा के लिए मिट गया, इधर-उधर ब्राह्मणत्व एवं क्षत्रियत्व पर अभिमान करनेवाली केवल कुछ मिश्रित जातियां ही शेष रह गयीं और इन जातियों के इस प्रकार अहंकार तथा आत्मप्रशंसा वाक्यों के कहने पर भी कि 'इस देश (ब्रह्मावर्त या ब्रह्मर्षि देश) में पैदा हुए ब्राह्मणों से ही संसार के सभी मनुष्य चरित्र-निर्माण की शिक्षा प्राप्त करेंगे'[1], इन लोगों को दीन वेश में दाक्षिणात्यों के पदप्रान्त में बैठकर विनयपूर्वक शिक्षा ग्रहण करनी पड़ी। इसका परिणाम हुआ भारत में वेदों का पुनरभ्युदय, वेदान्त का ऐसा प्रबल पुनरुत्थान जैसा भारत ने और कभी नहीं देखा था; यहा तक कि गृहस्थाश्रमी भी आरण्यकों के अध्ययन में संलग्न हो गये।

बौद्ध आंदोलन में क्षत्रियगण ही वास्तव में नेता रहे थो तथा बड़ी संख्या में उन्होंने बौद्ध धर्म स्वीकार किया था। सुधार तथा धर्म-परिवर्तन के उत्साह में संस्कृत भाषा तो उपेक्षित हो गयी, और लोक-भाषाओं का एकांत विकास होने लगा। अधिकांश क्षत्रिय वैदिक साहित्य एवं संस्कृत शिक्षा के क्षेत्र से अलग हो गये।

कालचक्र घूम कर आ रहा है। एक बार फिर से वही शक्ति-प्रवाह नि:सृत हो रहा है, जो शीघ्र ही समस्त जगत् को प्लावित कर देगा। एक वाणी मुखरित हुई है, जिसकी प्रतिध्वनि चारों ओर व्याप्त हो रही है एवं जो प्रतिदिन अधिकाधिक शक्ति संग्रह कर रही है, और वह वाणी अपने पहले की सभी वाणियों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है, क्योंकि यह अपनी पूर्ववर्ती उन सभी वाणियों का समष्टिस्वरूप है। जो वाणी एक समय कलकलनिनादिनी सरस्वती के तीर पर ऋषियों के अन्तस्तल में प्रस्फुटित हुई थी, जिस वाणी ने रजतशुभ्र हिमाच्छादित गिरिराज हिमाचल के शिखर पर प्रतिध्वनित हो कृष्ण, बुद्ध और चैतन्य में से होते हुए समतल प्रदेशों में अवरोहण कर समस्त देश को प्लावित कर दिया था, वही एक बार पुन: मुखरित हुई है। एक बार फिर से द्वार खुल गये हैं।

१. एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन:।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवा:।। मनु स्मृति।।

नव-सम्वत्सर मास एवं दिवस-व्यवस्था

डॉ. गौरीनाथ रस्तोगी

ह भारत में प्रचलित नव-सम्वत्सर वस्तुत: केवल भारतवासियों का ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानवीय सृष्टि के लिए नववर्ष के आगमन का सूचक है, क्योंकि कहा गया है कि ***चैत्र मासे जगत ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि, शुक्ल पक्षे समग्रं तु तदा सूर्योदये सति।*** सरल शब्दों में चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में ही ब्रह्मा जी ने सृष्टि की संरचना करते हुए सूर्य चन्द्र, पृथ्वी, नक्षत्रों आदि का सृजन किया तथा उनकी गति को आधार बनाकर काल-गणना प्रारम्भ की।

सूर्य की इस सृष्टि से पूर्व त्रैलोक्य भर में अमावस्या का घोर अन्धकार अपने पांव पसारे हुए था। दिनकर के अस्तित्व में आने के साथ पृथ्वी पर प्रकाश प्रारम्भ हुआ। ब्रह्माजी द्वारा इस सृष्टि-रचना तथा काल-गणना का सम्पूर्ण उपक्रम निसर्ग अथवा प्रकृति से तादात्म्य रखकर किया गया अमावस्या का अन्धकार नष्ट होने के पन्द्रह दिन बाद पूर्णिमा को चित्रा नक्षत्र होने से उस मास का नामकरण चैत्र किया गया।

इसी क्रम में विशाखा नक्षत्र से वैशाख, ज्येष्ठा से ज्येष्ठ, पूर्वाषाढ़ा से आषाढ़, श्रवण से श्रावण, पूर्वाभाद्रपद से भाद्रपद, अश्विनी से आश्विन, कृत्तिका से कार्तिक, मृगशिरा से मार्गशीर्ष (अग्रहायण), पुष्य से पौष, मघा से माघ तथा पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र से फाल्गुन मास का नामकरण हुआ।

पृथ्वी द्वारा रवि की निरन्तर परिक्रमा करने को दृष्टिगत रखते हुए बारह मास, सूर्य के उत्तरायण और दक्षिणायन तथा ऋतुओं आदि का विधान किया गया। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा के स्थान पर चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नव-सम्तत्सर के आरम्भ का कारण उक्त दिवस का घटाटोप अन्धकार को विदीर्ण कर सूर्य-नि:सृत प्रकाश-पुंज किरणों का बिखरना रहा है।

इस प्रकार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नव-सम्वत्सर का आरम्भ होना अन्धकार से निकलकर प्रकाश मार्ग पर अग्रसर होने के साथ-साथ निसर्ग अथवा प्रकृति पर आधारित है। इसी कालखण्ड में प्रकृति अपना स्वरूप परिवर्तित करती है। पर्वतों पर से बर्फ का पिघलना प्रारम्भ हो जाता है। शिशिर अथवा पतझड़ के बाद वसन्त ऋतु का आगमन होता है। चतुर्दिक हरियाली छा जाती है। जन-मानस में नवीन उत्साह, उमंग, कर्त्तृत्व-भाव का संचार होता है।

नवरात्र के आरम्भ के साथ जगज्जननी भगवती माता का पूजन-स्तवन होता है। संक्षेप में नव-सम्वत्सर प्रकृति एवं विज्ञान पर आधारित होकर मानव-समाज को 'चरैवेति' के रूप में निरन्तर गतिमान रहकर प्रगति पथ पर अग्रसर होने का संदेश देता है।

तिमिराच्छन्न अन्धकार को विदीर्ण कर प्रकाश की अनुपम छटा बिखेरनेवाले भगवान भुवन भास्कर की इस महिमामयी गरिमा के आलोक में सृष्टि सृजनकर्त्ता ब्रह्मा जी द्वारा सूर्योदय से

प्रथम दिवस रविवार के साथ पूर्णत: वैज्ञानिक आधार पर सप्ताह के सात दिवसों का नामकरण रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार एवं शनिवार के रूप में किया गया, जिसे सम्पूर्ण संसार ने आज भी मान्यता प्रदान कर रखी है।

सप्ताह के सात दिनों के इस नामकरण में ब्रह्माजी ने स्पष्ट किया कि अन्तरिक्ष अथवा आकाश में ग्रहों की स्थिति क्रमश: सूर्य, बुध, शुक्र, चन्द्रमा को साथ लेकर ब्रह्मा जी ने सप्ताह के सात दिनों का नामकरण किया है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि पृथ्वी पर दिनों का नामकरण करते समय पृथ्वी के नाम पर किसी दिवस का नामकरण नहीं किया जायेगा, किन्तु पृथ्वी के उपग्रह चन्द्रमा को इस नामकरण में इसलिए स्थान दिया जायेगा, क्योंकि पृथ्वी के निकटस्थ होने के कारण चन्द्रमा आकाशमण्डल की रश्मियों को पृथ्वी तक पहुंचाने में संचार उपग्रह का कार्य सम्पादित करता है और उससे मानवीय जीवन अत्यन्त गहन रूप में प्रभावित होता है।

हम सभी यह जानते हैं कि एक अहोरात्र अथवा दिवस या दिन-रात में २४ होरा या वेला अथवा घण्टे होते हैं। ब्रह्माजी ने इस २४ घण्टों में से प्रत्येक घण्टे या होरा का स्वामी क्रमश: सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्र, शनि, गुरु और मंगल को घोषित कर स्पष्ट किया कि सृष्टि की कालगणना के प्रथम दिवस पर अन्धकार को विदीर्ण कर सूर्य की प्रथम वेला या होरा से क्रमश: शुक्र की दूसरी, बुध की तीसरी, चन्द्रमा की चौथी, शनि की पांचवीं, गुरु की छठी और मंगल की सातवीं (घण्टा) होगी।

इस क्रम से इक्कीसवीं होरा या वेला पुन: मंगल की हुई। तदुपरान्त सूर्य की बाईसवीं, शुक्र की तेईसवीं और बुध की चौबीसवीं वेला के साथ एक अहोरात्र अथवा दिवस पूर्ण हो गया। इसके बाद आगामी दिवस को सूर्योदय के समय चन्द्रमा की वेला या होरा होने से उस दिवस का नामकरण चन्द्रमा के नाप पर सोमवार किया गया अथवा रविवार के पश्चात् सप्ताह का दूसरा दिन सोमवार निर्धारित हुआ। अब इसी क्रम से चन्द्र की प्रथम, आठवीं तथा पन्द्रहवीं, शनि की दूसरी, नवीं और सोलहवीं, गुरु की तीसरी, दसवीं और सत्रहवीं, मंगल की चौथी, ग्यारहवीं और अठारहवीं, सूर्य की पांचवीं, बारहवीं और उन्नीसवीं, शुक्र की छठी, तेरहवीं और बीसवीं बुध की सातवीं, चौदहवीं और इक्कीसवीं वेला का होरा होगी।

अब तीसरे दिन सूर्योदय के समय प्रथम होरा मंगल की होने से सोमवार से अगला दिवस मंगलवार सुनिश्चित हुआ। इसी क्रम से सातों दिवसों की गणना करने पर वे क्रमश: बुधवार, गुरुवार शुक्रवार तथा शनिवार घोषित हुए, क्योंकि मंगलवार से गणना करने पर इक्कीसवीं होरा या वेला गुरु पर समाप्त होकर वाईसवीं होरा मंगल, तेईसवी होरा रवि तथा चौबीसवीं होरा शुक्र की होगी। अब चौथे दिवस की प्रथम होरा बुध की होने से मंगलवार के उपरान्त बुधवार नामकरण किया गया।

इसी क्रम में बुधवार की प्रथम होरा से इक्कीसवीं होरा या वेला शुक्र की होकर वाईसवीं, तेईसवीं और चौबीसवीं होरा या वेला शुक्र की होकर बाईसवीं, तेईसवीं और चौबीसवीं होरा क्रमश: बुध, चन्द्र और शनि की होगी। तदुपरान्त पांचवें दिवस की प्रथम होरा गुरु की होने से बुधवार के दिन के पश्चात् का दिन गुरुवार कहा गया। पुन: छठा दिवस शुक्रवार होगा, क्योंकि गुरुवार को गुरु की पहली आठवीं, पन्द्रहवीं तथा बाईसवीं होरा के पश्चात् तेईसवीं होरा मंगल एवं चौबीसवीं होरा के पश्चात् तेईसवीं होरा मंगल एवं चौबीसवीं होरा सूर्य अथवा रवि की होगी। फलस्वरूप छठे दिवस

की प्रथम होरा का अधिपति शुक्र होगा।

सप्ताह का अन्तिम दिवस शनिवार घोषित किया गया है। इसका कारण यह है कि शुक्र की पहली, आठवीं, पन्द्रहवीं और बाईसवीं होरा के उपरान्त बुध की तेईसवीं तथा चन्द्रमा की चौबीसवीं होरा पूर्ण होकर सातवें दिवस सूर्योदय के समय प्रथम होरा शनि की आती है। इसी आधार पर सप्ताह का सातवां दिवस शनिवार घोषित किया गया है।

भारतीय काल-गणना में नक्षत्रों, ऋतुओं एवं मासों की भांति ही दिवसों के नाम पूर्णरूप से तर्कशुद्ध वैज्ञानिक गणना के आधार पर सुनिश्चित किये गये हैं। वारों अथवा दिवसों के निर्धारण तथा नामकरण को विश्वव्यापी मान्यता प्राप्त होना इसी तथ्य अथवा सत्य की पुष्टि है।

'मातृ छाया' एल.आई.जी. ११, एल.डी.ए. कालोनी,
ऐशाबाग, लखनऊ – २२६००४ (उत्तर प्रदेश)

समाचार पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से सम्बंधित विवरण

फार्म –४ (नियम ८ देखिए)

१. प्रकाशन स्थल	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी
२. प्रकाशन तिथि	:	अप्रैल, जुलाई, अक्तूबर, जनवरी माह का प्रथम सप्ताह
३. मुद्रक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
४. प्रकाशक का नाम	:	चेतराम
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
५. सम्पादक का नाम	:	डॉ० विद्या चन्द ठाकुर
क्या भारतीय नागरिक है?	:	हां
पता	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।
६. उन व्यक्तियों के नाम व पत्ते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के सांझेदार या हिस्सेदार हों।	:	ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान हमीरपुर नेरी गांव नेरी, डाकघर खगल, जिला हमीरपुर–१७७००१ हिमाचल प्रदेश।

मैं चेतराम प्रकाशक एवं मुद्रक इतिहास दिवाकर एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकृत जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गए विवरण सत्य हैं।

हस्ता/–
चेतराम
प्रकाशक
दिनांक १ अप्रैल, २०१२

कुल्लू में नव-सम्वत्सर

ओम प्रकाश 'शास्त्री'

चैत्र शुक्ल पक्ष की प्रथम तिथि को भारत में नव संवत्सर अर्थात् नव वर्ष आरम्भ होता है। इस नव संवत्सर को हिमाचल प्रदेश के कुल्लू क्षेत्र में नौंआ संवत कहते हैं। इस दिन नौंआ संवत के आधार पर पूरे साल भर के मेले, त्यौहार तथा उत्सवों आदि की तिथियां निश्चित की जाती हैं। वास्तव में यह नौंआ संवत शांत वातावरण में मनाया जाने वाला त्यौहार है।

यूं तो पूरे जनपद में पर्व, त्यौहार तथा उत्सव में नशा युक्त पेय पदार्थों से भरपूर एवं निषेधात्मक पदार्थों के सेवन का प्रचलन है परन्तु इस दिन किसी भी प्रकार के निषेधात्मक पदार्थों का सेवन अशुभ माना गया है। भले ही नशेड़ियों को ये पेय पदार्थ अशुभ न हों, परन्तु आम धारणा यही है कि इस नौंआ संवत् का शुभारम्भ किसी पौष्टिक एवं घी मिश्रित मिष्ठान या पदार्थ से किया जाता है। लोक मतानुसार यह विश्वास है कि इस दिन का आरम्भ जिस भी स्थिति में होता है, सारा साल उसी स्थिति में बीतता है। इसलिए इस दिन किसी भी प्रकार के ऐसे खाद्य पदार्थ का सेवन न किया जाए जिससे लड़ाई-झगड़े या किसी अप्रिय वातावरण का पूरे साल का आवरण बन जाए। इसलिए कुल्लू जनपद में नौंआ संवत् के दिन प्रात: ही पंछियों की आवाज़ सुनाई देने से पहले गुड़ या घी मिश्रित मिष्ठान पदार्थ ग्रहण करना अनिवार्य है।

गुड़ला या मीठा साजा

इन स्थानीय पर्वों को मनाने का अपना ही रंग ढंग होता है। हर घर की गृहणी अपने घर के सब सदस्यों का मुंह मीठे से भर कर, अपनी रसोई में आकर गोमूत्र एवं गोबर से लिपाई करके पवित्र बनाती है। प्राय: नये संवत् के दिन अधिकतर मीठे पकवान ही तैयार किए जाते हैं। मीठे साजे का अभिप्राय यह नहीं कि इस दिन नमकीन भोजन नहीं बनाए जाते अपितु मीठे भोजन के साथ नमकीन भोजन भी बनाया जाता है। परन्तु नमकीन भोजन परोसने से पूर्व सर्वप्रथम मीठे भोजन ही परोसे जाते हैं। इसलिए नव संवत्सर को यहां गुड़ला या मीठा साजा कहते हैं। साजा शब्द स्थानीय बोली में संक्रान्ति के लिए प्रयुक्त होता है।

गड़ाणी

सर्वप्रथम घर की गृहणी एक बर्तन में गुड़ का घोल तैयार करती है फिर एक बड़ी सी कड़ाही लेकर उसमें अंदाज़े से देसी घी डालकर चूल्हे पर चढ़ाती है। थोड़ा सा आटा लेकर उसे घी में भूनती है। तत्पश्चात् उस गुड़ के घोल को उस कड़ाही में उंडेला जाता है। उसे धीमी आंच में

पकाकर यह घोल कुछ गाढ़ा हो जाता है। यदि संभव हो तो उसमें दूध भी मिश्रित किया जाता है। इस प्रकार यह कुछ गाढ़ा और तरल घोल स्वादिष्ट और पौष्टिक पदार्थ बन जाता है। इसी स्वादिष्ट पदार्थ को स्थानीय बोली में "गड़ाणी" कहते हैं।

चिल्हड़े

एक बड़ी सी परात लेकर उसमें आटे और पानी को लेकर घोल तैयार किया जाता है, इसमें गुड़ आदि नहीं मिलाया जाता। तब चूल्हे पर एक बड़ा सा तवा चढ़ाकर घी आदि डालकर उसे सारे तवे में चुपड़ दिया जाता है। तत्पश्चात् उस आटे के घोल को किसी कड़छी या किसी अन्य कटोरी आदि के अंदाज़े से गर्म तवे पर फैलाया जाता है। फिर उसे पलटकर दोनों तरफ पकाया जाता है। इसी प्रकार तैयार होने पर उन्हें चिल्हड़े कहा जाता है। अपने घर आए अतिथियों को थाली में गड़ाणी डालकर व दो एक चिल्हड़े डालकर एक स्वादिष्ट भोजन परोसा जाता है। कुछ स्थानों पर चावल के आटे को पानी में पकाकर थोड़ी बहुत भिन्नता के साथ लगभग इसी भांति के पकवान तैयार होते हैं। दक्षिण वाम तट में रायसन के ऊपर हरिपुर तक के लोग चावल के आटे को किसी कड़ाही नुमा बर्तन में उबलते पानी में पकाकर एवं उसे हाथों द्वारा गोल-गोल आकार के छोटे-छोटे गोले बनाए जाते हैं। जिसे स्थानीय भाषा में ***गीचे*** कहा जाता है। कुछ स्थानों पर चावल के आटे और पानी का घोल बनाकर उसे गर्म तवे में घी चुपड़कर इसी प्रकार के गोले बनाए जाते हैं जिसे ***लौड़ी*** कहते हैं। चावल से बने इन पकवानों को दूध एवं घी के साथ खिलाया जाता है। यह सब स्वादिष्ट एवं पौष्टिक पदार्थ होते हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

प्राचीन काल से ही भारत वर्ष में नव संवत्सर मनाने की परंपरा रही है जिसका आयोजन चैत्र से शुरू होकर वैशाख तक होता है। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को तो इसका व्यापक प्रचलन है, लेकिन चैत्र मास की संक्रान्ति के त्यौहार को यहां जेठा विरशु कहते हैं जिसका अर्थ हुआ वर्ष आरम्भ का प्रथम ज्येष्ठ दिवस और वैशाख संक्रान्ति को यहां कोन्हा विरशु कहा जाता है अर्थात् वर्ष आरम्भ का कनिष्ठ (छोटा दिवस)। देश के कुछ भागों में वैशाख संक्रान्ति को बहुत महत्त्व प्राप्त है। इसी उपलक्ष्य में वैशाखी का त्यौहार पंजाब में बड़े उत्साह से मनाया जाता है। जब इस प्रदेश में फसलें पक कर तैयार होती हैं तो यहां के किसानों के पांव बैशाखी के पर्व में ढोलक की ताल पर थिरकने लगते हैं और अपने लुभावने गीत से वसंत के फूलों की महक को और बढ़ाते हैं :—

"जट्टा आई वैसाखी, ओ जट्टा आई वैसाखी,
फसलां दी मुक गई राखी, ओ जट्टा आई वैसाखी।"

संवत्सर के पश्चात् आदि कालीन भारतीय संस्कृति में सबसे छोटे युग की आयु पांच वर्ष रखी गई है। वृहस्पति ग्रह एक वर्ष तक एक राशि में रहता है। इस प्रकार बारह वर्ष में बारह राशियों

का चक्र पूरा करता है। ज्योतिष शास्त्रानुसार जब सूर्य चन्द्र वृहस्पति की दृष्टि एक नक्षत्र पर हो तब बारह वर्ष हो जाते हैं। पंच वर्षीय युग का परिगणन बारह वर्ष से करके साठ वर्ष का युग मानते हैं। इस काल में वर्षा, फसल इत्यादि कैसी होती है, इसका विचार करके ग्रहों के अनुसार ऋषियों ने इन साठ वर्षों के अलग-अलग नाम दिए हैं। जिस प्रकार इस वर्ष कलियुगाब्द ५११४, विक्रमी संवत् २०६९ एवं शक संवत् १९३४ का नाम विश्वावसु है। साठ संवत् अपने नाम अनुसार फल देने वाले हैं । इन संवतों के बारे में भास्कराचार्य और वराहमिहिर आदि ज्योतिर्विदों ने अपने अपने ग्रंथों में विशद विवरण दिया है।

सृष्टि का रहस्य

हिन्दू परम्परा में किसी भी धार्मिक अनुष्ठान में संकल्प पढ़ा जाता है जिसका आरम्भ इस प्रकार है – ***ॐ अद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपराद्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे।***

इस संकल्प में सृष्टि के आदि से लेकर वर्तमान काल तक की काल गणना होती है। वर्तमान काल में ब्रह्मा की आयु के पचास वर्ष पूरे होने पर दूसरे पचास वर्ष का प्रथम दिन लगा है, भाव यह कि वर्तमान श्वेत वाराह कल्प में पचास वर्ष की आयु व्यतीत हो चुकी है। एक कल्प ब्रह्मा का एक दिन माना जाता है। एक कल्प चार अरब, बतीस करोड़ मानव वर्ष के बराबर होता है। उतनी ही रात्रि भी होती है। अहोरात्र आठ अरब चौंसठ करोड़ मानव वर्ष के बराबर हुआ। ब्रह्मा की आयु १०० वर्ष बताई गई है। ब्रह्मा की १०० वर्ष की आयु पूरी होने पर महाप्रलय होगी और तत्पश्चात् पुनः सृष्टि रचना होगी। ब्रह्मा जी ने वर्तमान कल्प में सृष्टि रचना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को आरम्भ की है। शास्त्रों में इसका वर्णन है। कुल्लू की लोक परम्परा में भी माना जाता है कि नव संवत्सर के दिन ब्रह्मा जी ने सृष्टि को बनाया है।

गावं घुड़दौड़, डाकघर लरांकेलो
जिला कुल्लू (हिमाचल प्रदेश)

संवीक्षण

इतिहास का पुनर्लेखन

बाबा साहेब आपटे

भारत का इतिहास जो अब तक लिखा गया है, वह मुख्यत: विदेशी लेखकों ने लिखा है। उसमें हमारे भूतकाल को यथार्थ रूप में चित्रित करने की प्रवृत्ति नजर नहीं आती। इसके कई कारण हो सकते हैं। लेखकों का अज्ञान एवं पूर्वाग्रह तो बहुत बड़ी बाधा है ही, परन्तु दुनिया में भारत को बदनाम करने का एवं विजितों में हीन भावना निर्माण करने का अंग्रेजों का धूर्त कुचक्र सबसे प्रबल कारण रहा है।

इतिहास सम्बन्धी भ्रान्तियाँ :

इसी हेतु से 'भारत गरम देश होने के कारण यहां के लोग अधिक परिश्रम नहीं कर सकते, उनकी बुद्धि केवल तत्वज्ञान अथवा काव्य लिख सकती है', इत्यादि धारणाएँ बनाई गईं और उनकी पुष्टि में फिर कहा गया कि 'भारत में आर्य बाहर से आकर बस गये हैं। उन्होंने यहां के मूल निवासी द्रविड़ों को जीतकर समूचे देश पर कब्जा कर लिया'। किसी ने इसके आगे जाकर कहा-द्रविड़ भी बाहर से आए थे, यहां के मूल निवासी तो उरांव, मुंडा, संथाल, भील, गोंड आदि लोग हैं। इसी के अनुसार इन जातियों को आदिम जाति का माना गया। आज इन तथाकथित आदिम जातियों की उन्नति के लिए 'आदिम जाति सेवा संघ' भी चलाया जाता है।

वास्तव में तो 'आर्यवंश' की बात केवल मन:कल्पित है। भिन्न-भिन्न यूरोपीय भाषाओं में एक ही अर्थ प्रकट करने वाले और समान रूप रखने वाले कई शब्द मिलने के कारण पहले सबके लिए समान-भाषा की संभावना बतायी गयी। कुछ लोगों ने उसे 'आर्यान्' भाषा कहा, परन्तु उसमें साफ कहा गया था कि यह केवल एक 'टैंटेटिव प्रोपोजीशन' है। वह किसी ऐतिहासिक आधार पर खड़ा किया गया प्रमाणित विचार अथवा सिद्धान्त नहीं था। परन्तु तिल का ताड़ बनाकर भारत पर आर्यों के आक्रमण को एक स्वत: सिद्ध घटना मान लिया गया। हजार में से नौ सौ निन्यानवे विद्वान आंखें मूंदकर उसे स्वीकार करते दिखाई देते हैं। अंग्रेजी स्कूलों एवं कॉलेजों में यही पढ़ाया गया। आज भी यही पढ़ाया जाता है।

उपरोक्त कारणों के फलस्वरूप भारत का रामायण-महाभारत में जो इतिहास मिलता है, उसको कल्पित पौराणिक गाथा (माइथोलोजी) कहा गया और भारत में मुसलमानों के पहले वाले कालखण्ड को अन्धकारमय युग बताया गया। क्या यह आश्चर्य नहीं कि भारतीयों ने उसके सहस्रों वर्ष पूर्व आग्नेय-एशिया में विस्तृत उपनिवेश निर्माण कर जो एक अनोखा सांस्कृतिक साम्राज्य निर्माण किया था, उसका नाम भी आज कई पढ़े लिखे भारतीय नहीं जानते।

विकृत दृष्टि-कोण

विकृत दृष्टि से भारतीय इतिहास लिखने वालों ने इतिहास के कालखण्डों का विभाजन भी अत्यन्त ही विचित्र ढंग से किया। पहला प्राचीन काल, दूसरा शक-हूणादि के आक्रमणों का काल, तीसरा मुस्लिम काल एंव चौथा ब्रिटिश काल। फिर इतिहास लिखने के लिए जो आधारभूत सामग्री ली

गयी वह कौन सी थी? विदेशी लेखकों के प्रवास वर्णन तथा उन्हीं के शोध-निबन्धादि। यह भी एक सिद्धान्त सा ही माना गया कि भारतीय सामग्री विश्वसनीय नहीं है। अत: इस आधार पर जो पुस्तकें लिखी गईं, उनमें विदेशियों को महत्त्व और प्राधान्य मिलना स्वाभाविक ही था। भारत के पुत्रों के पुरुषार्थ एवं प्रतिभा के चित्रण इनमें नीं के बराबर ही स्थान पाते रहे। लेखकों के मतों में भारत केवल एक भौगोलिक इकाई मात्र था, फिर भारत को मातृभूमि मानकर उसके पुत्र होने में गर्व का अनुभव करने वालों का उल्लेख कहां से होताद्य इसलिए महाराणा प्रताप सिंह तथा छत्रपति शिवाजी जैसे राष्ट्रीय महावीरों को अकबर एवं औरंगजेब के विरुद्ध बगावत करने वाले पुरुषों के रूप में अत्यन्त ही गौण स्थान देकर वर्णन किया गया। राष्ट्र के चिरंतन स्फूर्ति-स्रोत बने हुए, महापुरुषों की इस प्रकार उपेक्षा होती रहेगी तो गत हजार वर्षों की विदेशी दासता के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में राष्ट्र के रूप में भारत को खड़ा करना कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव भी हो जायेगा।

भारतीयकरण की प्रक्रिया

भारतीय इतिहास के तथ्यपूर्ण पुनर्लेखन का एक और महत्त्व का उपयोग है। इस इतिहास के अध्ययन से कई ऐतिहासिक घटनाओं की कारण मीमांसा की जा कसती है और इसके प्रकाश में वर्तमानकालीन व्यवहार की दिशा निश्चित हो सकती है। 'ग्रीक, शक, हूणों को पहले हमने आत्मसात् किया, आज हम मुसलमानों को आत्मसात् क्यों नहीं करते हैं?' ऐसा प्रश्न आज जाने-माने नेता भी पूछते हैं। इस पर इतिहास की साक्ष्य यदि ली जाएगी तो इतिहास हमें कहेगा कि विदेशियों के सामने घुटने टेककर उनको हजम नहीं किया जा सकता। अभारतीयों का भारतीयकरण जिस प्रक्रिया से हुआ, उसमें चार अवस्थाएँ देखी जा सकती हैं। पहली अवस्था विदेशी आक्रमण की। देश की विशालता, आवागमन के साधनों की कठिनाइयाँ एवं भारत की एकता राजनीतिक न होकर सांस्कृतिक होने के कारण विदेशियों का तुरन्त प्रतिकार नहीं होता और फलत: भारत के कुछ भागों पर उन विदेशियों का शासन स्थापित हो जाता है। दूसरी अवस्था में भारत की सन्तान जागृत एवं संगठित होकर विदेशी शासन का पराभव कर देती हैं। उसके बाद तीसरी अवस्था प्रारम्भ हो जाती है, जब विदेशी समाज शान्तिपूर्वक जीवन बिताने को बाध्य हो जाता है। भारतीय प्रजा उनको भारत छोड़ने को नहीं कहती। वे अपनी-अपनी सामाजिक रूढ़ियों का पालन करते हैं, उसमें भारतीय प्रजा कोई बाधा नहीं पहुंचाती। इस प्रकार जब दो-चार अथवा अधिक पीढ़ियाँ बीत जाती हैं, तब धीरे-धीरे विदेशी समाज भारत के साथ एक रूप हो जाता है। यह चौथी अवस्था है। प्राय: इस क्रम से ग्रीक, शक, हूणादि विदेशी समाज भारतीय बन सके हैं। इस बात का यदि ठीक ज्ञान रहता तो पिछले चालीस-पचास वर्षों का इतिहास कुछ और ही प्रकार का घटित होता और अखण्ड भारत के स्थान पर खण्डित भारत का निर्माण न हुआ होता।

आत्म गौरव का संस्कार

भारत की नयी पीढ़ी के चरित्र-निर्माण कार्य को सम्पन्न करने के लिए भी भारत के इतिहास का राष्ट्रीय दृष्टि से पुनर्लेखन होना अतीव आवश्यक है। अंग्रेज़ों के आने के पहले भारत में लाखों मठ-मन्दिरों में रामायण, महाभारत एवं पुराणों का परिचय आबाल-वृद्ध स्त्री-पुरुषों को प्रवचनादि के द्वारा कराया जाता था। इसलिए वे व्यक्तिगत रूप में चरित्रवान एवं धर्मभावना-युक्त बन जाते थे। उनमें राजनैतिक स्तर पर संगठित भाव भले ही न हो, किन्तु उनमें अधिकांश लोग भारत-भक्त बन जाते थे। आज नई पीढ़ी उस पवित्र संस्कार से वंचित रह जाती है। मठ-मन्दिरों में वह कार्य उस मात्रा में नहीं

होता और 'इण्डिया इज ए नेशन इन द मेकिंग' (भारत एक निर्माणाधीन राष्ट्र है) के झूठे सिद्धान्त के पीछे लगने के कारण देश का वातावरण ऐसा बन गया है कि बूढ़े-अनपढ़ लोगों को छोड़कर मन्दिरों में कोई जाता ही नहीं। नयी पीढ़ी को देशभक्ति एवं चरित्र निर्माण के संस्कार इतिहास के सम्यक् अध्ययन के द्वारा प्राप्त हो सकते हैं। इस दृष्टि से मार्गदर्शक सिद्ध होने वाले श्रेष्ठ पुरुषों की खानें हमारे यहां भरी पड़ी हैं, किन्तु उनकी ओर पीठ फेरने वालों के लिए भला वे क्या कर सकते हैं?

पश्चिम की चकाचौंध

हमारी नई पीढ़ी पश्चिम की ओर देखती है। कारण, अमेरिका, रूस आदि की प्रशंसा-गाथा बार-बार उनके कानों पर आती रहती है और उसका अत्यन्त अनिष्ट परिणाम उन पर होता है। पश्चिम के देश अपने उत्कर्ष के शिखर पर होने के कारण और हम भारतीय किसी जबरदस्त बीमारी से जैसे-तैसे बाहर निकले हुए रोगी के समान होने के कारण, उनके साथ अपनी तुलना करने में हमारे विद्यार्थियों के मन पर पश्चिम की चमक-दमक का प्रभाव पड़ जाता है, और अपरिपक्व बुद्धि के कारण वे इस निष्कर्ष पर पहुंच जाते हैं कि भारत में जन्म ग्रहण करना अपना परम दुर्भाग्य है। उनके शिक्षक और पालक भी उनका मार्गदर्शन नहीं कर सकते, क्योंकि भारतीय इतिहास के तथ्य एवं उसके सत्य स्वरूप का ज्ञान उनको भी अप्राप्त सा ही रहता है। इस प्रकार की मनोदशा का परिणाम इस संकल्प में हो रहा है कि यदि किसी पश्चिमात्य देश में जाकर बसना सम्भव हो तो वहां ही जाकर रहेंगे। इस प्रकार गत बीस-पच्चीस वर्षों में विदेश में जाकर बसने वाले बुद्धिमान, कर्तृत्त्व-सम्पन्न भारतीयों की संख्या हजारों-लाखों में गिनी जा सकती है।

लेखकों की आत्मविश्वासहीनता

भारत के इतिहास का पुनर्लेखन करने का प्रयास कुछ भारतीय लेखकों ने छुट-पुट रूप में अवश्य किया है। परन्तु वे भी इस मनोवृत्ति से ग्रस्त हैं कि भारतीय ग्रन्थों में उल्लिखित किसी घटना को तब तक प्रमाणित नहीं माना जा सकता, जब तक उसे किसी विदेशी लेखक का समर्थन प्राप्त न हो। कुछ लोग इससे भी आगे बढ़कर 'भूत में से वर्तमान एवं उसी के आधार पर भविष्य का निर्माण' इस सिद्धान्त को भुलाकर, भूतकालीन इतिहास के रूप को तोड़-मरोड़कर वर्तमान की भूमिका के अनुरूप रंग में रखने का दुस्साहस करते दिखाई देते हैं।

भविष्य के निर्माण का आधार

यद्यपि भारतीय इतिहास का राष्ट्रीय दृष्टि से पुनर्लेखन का काम सरल नहीं और छोटा भी नहीं, परन्तु भूतकालीन इतिहास के समुचित ज्ञान के आधार के बिना भविष्य के निर्माण की दृष्टि और प्रेरणा राष्ट्रीय समाज के घटकों को कदापि प्राप्त नहीं हो सकती और इसी कारण संसार की राष्ट्रमालिका में भारत को उचित स्थान नहीं मिल सकता। संसार के विभिन्न राष्ट्रों के सामने भारत की प्रतिमा ठीक प्रकार से उजागर करना जहां हमारे आज के प्रयत्न-पुरुषार्थ पर निर्भर है, वहीं उसकी पार्श्वभूमि के रूप में उनको हमारे भूतकाल का सम्यक् दर्शन कराना भी हमारा आवश्यक कर्त्तव्य है। इस ओर यदि ध्यान नहीं दिया तो स्वामी विवेकानन्द, योगी अरविन्द, लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि महापुरुषों ने समस्त संसार में भारत के प्रति जो आदर एवं श्रद्धा के भाव जगाए थे, वे विफल हो जायेंगे और ऐसा कहना पड़ेगा कि भारत के भाग्योदय का दिन अभी बहुत दूर है।

संकल्प-पाठ का विवेचनात्मक अध्ययन

डॉ. ओम दत सरोच

हमारी संस्कृति कर्म-प्रधान है। उपनिषद् निरन्तर कर्म करने की प्रेरणा देते हुये सौ वर्ष की आयु प्राप्त करने की कामना करते हैं कि – ***कुर्वन्नेह कर्माणि जिजीविषामः शरदःशतम्।*** महाभारत युद्ध के समय जब अर्जुन मोहासक्त हो कर युद्ध से विमुख होने लगा तो श्रीकृष्ण ने उसे कर्म का महत्त्व समझाते हुये कर्मयोग का ज्ञान देकर उसे युद्ध-कर्म में प्रवृत्त किया। श्रीमद्‌भगवद् गीता के तृतीय अध्याय में कर्म-प्रवृति की प्रेरणा देते हुये श्रीकृष्ण कहते हैं:–

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ।

शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्धये कर्मणः ।। गीता–३–८.

अर्थात् हे अर्जुन तुम कर्म करो, कयोंकि अकर्म (निठल्ला बैठने से) से कर्म करना श्रेष्ठ है। बिना कर्म किये शरीर-निर्वाह भी नहीं हो सकता है। शास्त्रों में सौ वर्ष की आयु की कामना के साथ-साथ सौ वर्ष तक निरन्तर कार्यशीलता और इन्द्रियों की सक्रियता की कामना की गई है जैसा कि, इस मन्त्र में स्पष्ट है:–

जीवेम शरदः शतम् पश्येम शरदः शतंश्रुणुयां शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमहीनाः स्याम् शरदः शतं भूयश्चशरदः शतम्।।

अतः स्पष्ट है कि, कर्म करना मानव का परम कर्तव्य तथा स्वभाविक धर्म है ।

वेद विश्व का आदि ज्ञान है। वेद-ज्ञान की दो मुख्य धारायें हैं – ज्ञानकाण्ड और कर्मकाण्ड। ज्ञान-काण्ड के अर्न्तगत दार्शनिक चिन्तन परमेश्वर महिमा एवं विभिन्न देवस्तुतियां आती हैं। कर्मकाण्ड में यज्ञादि विधान पूजनादि आते हैं। कर्म-प्रवृति-प्रधान होने के कारण कर्म काण्ड का अधिक विस्तार एवं प्रसार हुआ है। कर्म के प्रति मानव की स्वभाविक प्रवृति होती है किसी भी कर्म के लिये मानसिक एवं शारीरिक सिद्धता जरूरी है। शारीरिक क्रियाशीलता से पहले मानसिक रूप से कार्य के लिये तैयार होना आवश्यक है। यदि मन किसी कार्य के लिये तैयार और तत्पर होता है तो आधा कार्य तो अनायास ही हो जाता है और यदि मनोभूमि में कर्म का अंकुर नहीं फूटता है तो केवल शारीरिक श्रम के बल पर कार्य रूपी पौधा पनप नहीं सकता। इसलिये कर्म के साथ मन का संयोग होना मनीषियों ने आवश्यक बताया है। कार्य का चिन्तन करना,उसकी कार्य योजना बनाना व कार्य करने की दृढ इच्छा व्यक्त करना ही संकल्प कहलाता है। किये जाने वाले कर्म (कार्य) की सफलता के लिये संकल्प अनिवार्य अंग है।

हमारे धार्मिक-कर्मकाण्ड में संकल्प पाठ आवश्यक अंग है। संकल्प के महत्व एवं आवश्यकता पर पुराणों,स्मृतियों व पद्धति ग्रन्थों में व्यापक चिन्तन ऋषियों ने किया है।

संस्कार-भास्कर पद्धति-ग्रन्थ का उल्लेख है कि :—

संकल्पेन बिना यत्कर्म किंचित् कुरुते नरः ।

फलं चात्यल्पकं तस्य धर्माधर्मक्षयो भवेत्।।

अर्थात् संकल्प के बिना व्यक्ति जो कर्म करता है, उसका फल कम हो जाता है, तथा वह कर्म धर्म का भी नाश करता है। मुनि कात्यायन ने भी कर्मानुष्ठान में संकल्प को मुख्य अंग मानते हुये बिना संकल्प किये कर्म को निष्फल कहा है:—

संकल्प एव मुख्यः स्यात् स्नानदानादि कर्मसु।

संकल्पेन रहितं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।।

मार्कण्डेय-पुराण के अनुसार यज्ञ, व्रत नियम, धर्म आदि समस्त कर्म संकल्पमूलक हैं, अर्थात संकल्प के बिना नहीं हो सकते हैं:—

संकल्पमूलकः कामो वै यज्ञाः संकल्प-संभवाः।

व्रतं नियमं धर्मो च सर्वे ससंकल्पाः स्मृताः।।

स्पष्ट है कि कर्मकाण्डीय-अनुष्ठानों में संकल्प-वाचन शास्त्र सम्मत अनिवार्य अंग हैं। इसका एक दूसरा पहलू भी है। व्यक्ति पाप कर्म चुपके से, बिना किसी को बताये करता है, तथा कोशिश करता है कि उसे कोई पाप कर्म करते हुये न देखे, परन्तु पुण्य-धार्मिक एवं सद्कर्म घोषणा-पूर्वक किये जाने चाहिये, जिससे किये जाने वाले कर्म का लक्ष्य एवं उद्देश्य भी निश्चित हो जाता है। अपना तथा अपने कुलगोत्रादि का परिचय देते हुये, देशकाल के परिचय व खगोलीय ग्रह नक्षत्रों को साक्षी मानते हुये संकल्प के माध्यम से जो कर्मानुष्ठान करने की घोषणा की जाती है, उससे मनोबल भी बढ़ता है, मन की शिथिलता व कुसंस्कार दूर होते हैं तथा सत्पुरुषों व सत्शक्तियों का उस कर्म के प्रति सहयोग व मार्गदर्शन भी मिलता है, जिससे किये जाने वाला कर्म सफल होता है। संकल्प-वाचन से व्यक्तिगत कर्म भी सार्वजनिक हो जाता है तथा यह व्यक्ति के साथ-साथ समाज को भी प्रभावित करता है। इस प्रकार कर्म के साथ मनोभावना को जोड कर कर्म की सफलता का सूत्र संकल्पपाठ के माध्यम से ऋषियों ने दिया है। अतः स्नान, दान, जप, अनुष्ठान, पूजन, संस्कार आदि समस्त धार्मिक एवं सांस्कृतिक-अनुष्ठानों में संकल्प-पाठ महत्वपूर्ण अनिवार्य अंग है।

संकल्प शब्द का सामान्य अर्थ विचार, मनोभाव, अथवा प्रतिज्ञा होता है। सम् उपसर्ग-पूर्वक कृप् धातु से भाव अर्थ में घञ् प्रत्यय लगाने पर संकल्प शब्द बनता है। व्यापक-संदर्भ में इस शब्द के इच्छाशक्ति, कामनाशक्ति, मानसिक-दृढता, प्रयोजन, उदेश्य, विचार-चिन्तन, विमर्श, कल्पना, मन, हृदय, धार्मिक कृत्य करने की इच्छा एवं ऐच्छिक पुण्य कार्य से फल की आशा आदि अनेक अर्थ प्रचलित हैं। अमरकोश के अनुसार '' संकल्प कर्म मानसम्'' अर्थात् संकल्प मानसिक कर्म है। संकल्प शब्द का व्यापक अर्थ क्षेत्र है। यह कई अर्थों में प्रयुक्त होता है। यहां ध्यान देने योग्य है कि, संकल्प के सभी अर्थ मन के साथ जुड़े हैं तथा विभिन्न मनोभावों तथा प्रवृतियों को व्यक्त करते हैं। मन से कर्म के साथ न जुड़ने से कर्म की प्रवृति व

सफलता नहीं हो सकती है। शुक्लयजुर्वेद के ''प्रसिद्ध शिव संकल्पसूक्त'' में मन के शुभ संकल्पों वाला होने व कर्म से मन की युति की कामना की गई है। ''तन्मे मन: शिव संकल्पमस्तु'' यह मन्त्रांश इसी भावना को व्यक्त करता है। मन और कर्म के सम्बन्ध की व्याख्या करते हुये वेद भाष्यकार महीधर लिखते हैं:– ''आत्मा मनसा संयुज्यते मन इन्द्रियेणेन्द्रियमर्थेनेति न्यायोक्तेर्मन: सम्बन्धमन्तरा तेषामप्रवृते:। तादृशं मे मन: शांन्तसंकल्पमस्तु।'' शुक्ल यजु०-३४-१ दूसरे मन्त्र की व्याख्या में महीधर लिखते हैं–'' ––––––––––यन्मनो बिना किंचन् किमपिकर्म क्रियते जनै:। सर्वकर्मसु प्राणिनां मन: पूर्वं प्रवृतेर्मन: स्वास्थ्यं बिना भावादि व्यर्थ:।'' महीधरभाष्य-३४-२ अर्थात् आत्मा का सम्बन्ध मन से, मन का इन्द्रियों से ओर इन्द्रियों का अर्थ कर्म से सम्बनध होता है, इस न्याय सिद्धान्त से मन के बिना कर्म प्रवृति नहीं होती है। मन के बिना कोई भी कर्म नहीं किया जा सकता है। सभी कर्मो में प्राणियों के मन की पहले प्रवृति होती है और मन स्वस्थ न हो तो कर्म सफल नहीं हो सकता। अत: मन शान्त और शुभविचारों वाला बने यह कामना इस सूक्त में की गई है। किसी भी कार्य की सफलता तभी संभव है, यदि उसे पूर्ण मनोयोग से किया जाये। शारीरिक श्रम के साथ-साथ उस कर्म के साथ मन की एकाग्रता, दृढ इच्छाशक्ति व मानसिकता आवश्यक है। संकल्प पाठ से क्रियामाण कर्म के प्रति, निष्ठा, श्रद्धा, तत्परता एवं समर्पण पैदा होता है। इसलिये कर्मकाण्ड में संकल्प-पाठ का विधान अंग रूप में किया गया है ।

कर्मकाण्डीय अनुष्ठानों में किये जाने वाले संकल्प-पाठ में विभिन्न आयामों का समावेश है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, खगोल, भूगोल के साथ-साथ सृष्टि-आरम्भ से लेकर वर्तमानकाल तक की काल-गणना, ऋषि परम्परा तथा कुलपरम्परा का बोध संकल्प-पाठ से होता है। अनन्त विस्तृत ब्रह्माण्ड, जो कि अनन्तकाल से अस्तित्व में है, उसमें स्थित चौदह भुवन, उनमें भी भूलोक उसके अनेक द्वीप खण्ड, क्षेत्र विशेष में स्थित कर्म-कर्ता व्यक्ति की स्थिति को बताने वाली संकल्प-वाचन की परम्परा वास्तव में सृष्टि की उत्पति से लेकर वर्तमान-काल तक के इतिहास को दर्शाती है। अतीत से वर्तमान का संयोग, समष्टि ब्रह्माण्ड से व्यक्ति कर्मकर्ता का संयोग तथा मन से कर्म का संयोग संकल्प से होता है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड परमेश्वर का ही विराट रूप है। पुरुष रूप परमेश्वर से विराट रूप ब्रह्माण्ड की उत्पति हुई जैसा कि ऋग्वेद का वचन है:–

ततो विराडजायत विराजोऽधिपुरुष:।
स जातोऽत्यरिच्यत् पश्चाद्भूमिमथोपुर:।। ऋग्वेद १०–९०–५.

परमेश्वर रूप अनन्तकालिक विराट ब्रह्माण्ड में अत्यन्त सूक्ष्म बिन्दुरूप में स्थित कर्मकर्ता व्यक्ति का तादात्म्य संकल्प पाठ के माध्यम से जोडना वास्तव में आत्मा का परमात्मा से तादात्म्य स्थापित करना है। इस प्रकार संकल्प पाठ के मुख्यत: तीन पक्ष सामने आते हैं –

१. मानसिक पक्ष २. आध्यात्मिक-पक्ष ३. ऐतिहासिक पक्ष।

मानसिक-पक्ष कर्म के साथ निष्ठा, श्रद्धा, तत्परता तथा समर्पण को व्यक्त करता है। आध्यात्मिक पक्ष आत्मा से परमात्मा अर्थात् व्यष्टि का समष्टि के साथ तादात्म्य प्रकट करता है ऐतिहासिक पक्ष सृष्टि के आरम्भ से लेकर वर्तमान काल तक के कालखण्डों, भूगोल एवं खगोल आदि का बोध करवाता है। इनमें मानसिक व आध्यात्मिक पक्ष मनन, चिन्तन तथा अनुभूति के

विषय हैं। ऐतिहासिक पक्ष इतिहास की सनातन-परम्परा का परिचायक है। अत: यहां संकल्प वाचन-परम्परा का इसी दृष्टि से विवेचन सम्मिलित है।

संकल्पपाठ से ही कर्म अनुष्ठान का आरम्भ होता है। कर्म की प्रकृति के अनुसार संकल्प-वाचन का प्रचलन है। सन्ध्या-वंदन, जप आदि नित्य कर्मो में संक्षिप्त संकल्प पढ़ा जाता है, जिसमें सामान्यत: सम्वत्, मास पक्ष, तिथि आदि का उच्चारण करके कर्म करने की प्रतिज्ञा की जाती है। हेमाद्रि का उल्लेख है कि :—

संकीर्त्य मासपक्षादीन् निमितानि तथैव च ।
इदं कर्म करिष्येऽहमिति संकल्पमाचरेत् ।।
मास पक्षतिथीनां निमितानां च सर्वशः ।
उल्लेखमकुर्वाणो न तस्य फलभाग्भवेत् ।। हेमाद्रि

मास,तिथि पक्ष तथा किये जाने वाले कर्म का उदेश्य उच्चारण करते हुये संकल्प का आचरण करे, ऐसा न करने पर उस कर्म का फल नहीं मिलता है। विशेष कर्मानुष्ठानों में महासंकल्प-पाठ करने का विधान है, जैसा कि ऋषि मरीचि ने कहा है :—

कन्यादाने नदीस्नाने तुलादानादिषु द्विज ।
प्रायश्चितेषु सर्वत्र महासंकल्पमाचरेत् ।
कृत्वा कुरुते तदानन्त्याय कल्पते ।।

कन्यादान, नदीस्नान तीर्थस्नान तुलादान, प्रायश्चित् कर्म, यज्ञ, व्रत आदि विशेष अनुष्ठानों में महासंकल्प का आचरण करके अनन्त फल की प्राप्ति होती है। संकल्प के दो रूप संक्षिप्त अथवा सामान्य संकल्प तथा विस्तृत अर्थात् महासंकल्प है। महासंकल्प के अर्न्तगत सामान्य संकल्प-पाठ का भी समावेश है । हेमाद्रि में दिये गये महासंकल्प का मूल—पाठ इस प्रकार है:—

''हरि: ॐ विष्णुर्विष्णुविष्णु: तत्सदथानन्तवीर्यस्य श्रीमन्नारायणस्य, अचिन्त्यापरिमितानन्तशक्तिसमन्वितस्य स्वकीयमूलप्रकृतिपरमशक्त्या प्रक्रीडामानस्य, समस्तजगदुत्पतिस्थितिलयकारणस्य, रक्षाशिक्षाविचक्षणास्य, प्रपन्नपारिजातस्य, अशेषपराक्रमस्य, सच्चिदानन्दसन्दोहरूपे स्वात्मनि सर्वाधिष्ठाने स्वज्ञानकल्पितानां महाजलौघमध्ये परिभ्रममाणानामनेक कोटिब्रह्माण्डानामेकतमेऽस्मिन् ब्रह्माण्डे, पृथिव्यप्तेजोवायवाकाशाहंकार-महदव्यकात्मकैर्दशगुणोतरै:सप्तभिरावरणैरावृते, आधारशक्तिश्रीकूर्म-वराहधर्मानन्ताष्टदिग्गजादिप्रतिष्ठिते,ऐरावत-पुण्डरीक-वामन-कुमुद-अंजन-पुष्पदन्त-सार्वभौम-सुप्रतीकाख्याष्टदिग्दन्तिशुण्डादण्डोतम्भिते, तदेत-द्ब्रह्माण्डान्तर्गतभुवर्लोक-स्वर्लोक-महर्लोक-जनलोक-तपोलोक-सत्यलोका- ख्यानां सर्वज्ञ सर्वशक्ति सर्वोतम-सर्वाधिप-श्रीचतुर्मुखप्रभृतिस्वस्वलोकाधिष्ठातृपुरुषाधिष्ठितानामधोभागे, फणिराजराजस्य शेषस्य सहस्र-फणामण्डलैकफणोपरि सर्षपकणायमानमहीमण्डलान्तर्गताल-वितल-सुतल-तलातल-महातल-

रसातल-पातालानां स्वस्वाधिष्ठानाधिष्ठताना- मूर्ध्वभागे, भूर्लोक, सुमेरु-मेरु-मन्दर-मन्दराचल-निषध-हिमगिरि-श्रृंगवद्-हेमकूट-दुर्धर्ष-पारियात्र-शैल-महाशैल-महेन्द्र-सह्य-मलयाचल-विध्य-ऋष्यमूक-चित्रकूट—मैनाक—मानसोतर—त्रिकूट- उदयाचलपर्यन्तानेकाभिधा-नाद्रिगणाप्रतिष्ठितायां, जम्बू-प्लक्ष-शाल्मली-कुश- क्रौंच-शाक-पुष्कराख्य-सप्तद्वीपवत्यां, लवण- इक्षु-सुरा- सर्पिः- दधि-क्षीर-शुद्धोदकाख्यसप्तसागर- समन्वितायां, समस्तभूरेखायां, कमलकदम्बगोलाकारायां वर्तमाने, कुवलयकोशान्तर्गतदलवद्विराजमाने, उतरकुरु-हिरण्यक-भद्र-अश्व-केतुमाल-इलावृत-हरिवर्ष-किंपुरूष- भारताख्यनवखण्डवति, जम्बूद्वीपे, सर्वेभ्यो व्यतिरिक्तसारवति, देवादिभिरप्यभीष्टसुकृतक्षेत्रभूतहेतुनाऽभिल-षिततमें, अंग-वंग-कलिंग-काम्बोज-सौवीर-सौराष्ट्र-महाराष्ट्र-उत्कल-मगध-मालव-नेपाल-केरल-चोल-गौड-मलय-कुरु-पांचाल-सिंहल-वत्स-मत्स्य-द्राविड-कर्णाट-राटव-शूरसेन-कौंकणा-टोकण-पाण्डय-पुलिन्ध्र-आन्ध्र-द्रौण-दशार्ण-विदेह-विदर्भ-केकय-मैथिल-कोशल-कुन्तल-मैन्ध्रव-जावल-सव्रसिन्धु-मद्र-मध्यदेश-पर्वत-त्रिगर्त-काश्मीर-पृष्टाहार-चेदि-सिन्धु- पारसीक-गान्धार-वाहलीक-पंच्चाम्बुप्रभृतिबहुविधदेशविशेषसम्पन्ने, विन्ध्यारण्य- दण्डकारण्य-चम्पकारण्य-नैमिषारण्य-द्वैतारण्य-हर्यारण्य-काम्यकारण्य-सैन्धवारण्य- कदलिकारण्य-धर्मारण्येतिदशारण्यपरिमरि-मणिडते, अयोध्या-मथुरा-माया-काशी- कांची-अवन्तिका-द्वारवतीतिसप्तमोक्षदपुरीविराजिते, कुमारिका-क्षेत्र-पुरुषोतमक्षेत्र- कुरुक्षेत्र-हरिद्वारक्षेत्र-मालक्षेत्रान्विते, कलापग्राम-शम्भल-ग्राम-नन्दीग्राम- इतिग्रामत्रयसम्पन्ने,श्रीगंगा-युमना-सरस्वती-गोदावरी-नन्दा-अलकनन्दा-मन्दाकिनी- कौशिकी-नर्मदा-सरयू-कर्मनाशा-चर्मण्वती-क्षिप्रा-वेत्रवती-कृष्णा-कावेरी-फलगु-मार्कण्डेय-रामगंगा-शतद्रु-विपाशा-ऐरावती-चन्द्रभागा-वितस्ता-सिन्धु-दृषद्वती-तुंगभद्रा-गण्डकीप्रभृत्यनेक-नदीनदवति, यम-नियम-आसन-प्राणायाम- प्रत्याहार-धारणा-ध्यानसमाध्यष्टांगयोगनिष्ठागरिष्ठवसिष्ठ-वाल्मीकि-कपिल-व्यासादिमहर्षिगणाधिष्ठिते, भरतखण्डे, आर्यावर्तेकदेशान्तर्गतपुण्यक्षेत्रे, विपाशा-शतद्रुमध्य-वर्तिप्रदेशे, अमुकस्थाने, अद्य महापुरुषस्य श्रीविष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य एतस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे, श्रीश्वेतवाराहकल्पे, सप्तमे वैवस्वत मन्वन्तरे, अष्टाविंशतितमेकलियुगे, कलिप्रथमचरणे, बुद्धावतारे, अमुकसंवत्सरे, अमुकायने, अमुकमासे, अमुकपक्षे, एवं गुणानगणाविशेषणा-विशिष्टायांशुभपुण्यतिथौ, अमुकवासरे, अमुकनक्षत्रे, अमुकयोगे-अमुककरणो, नवग्रहेषुततच्छुभस्थानस्थितेषु, अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरोऽ हमुकशर्मासपत्नीकोऽहं (इसके उपरान्त किये जाने वाले कर्म का उद्देश्य एवं नाम का उच्चारण किया जाता है) यथा ममात्मनः सपरिवारस्य लोकस्य वा सर्वारिष्टशमनार्थं सुख समृद्धयर्थंच श्रीपरमेश्वर प्रीत्यर्थं अमुक कर्म करिष्ये।

प्राचार्य, संस्कृतमहाविद्यालय, चकमोह,
जिला हमीरपुर (हि०प्र०)

महाराज श्री अग्र का युग तथा उनके वंशज

ओम प्रकाश गर्ग 'मधुप'

एक प्राचीन कहावत है कि 'यथा राजा तथा प्रजा' यही सूत्र इतिहास लेखन में विद्वत् जनों के समक्ष अति प्राचीन काल से रहा होगा तभी विश्व के लगभग सभी इतिहास ग्रंथ राजन्य वर्ग तथा उनकी शासन व्यवस्था को ध्यान में रखकर ही लिखे गए हैं। भारतवर्ष की परम्परा में राजा की पदवी का अधिकारी क्षत्रिय ही होता है। यह हो सकता है कि भारतीय इतिहास के प्राचीन संग्रह में राजन्य क्षत्रियों को ही सम्मिलत किया जा सका है, अन्य राजाओं को नहीं। जो भी हो बौद्ध तथा जैन साहित्य से पहले के लिखे एवं संकलित किये गये इतिहास में क्षत्रिय राजाओं के सम्बन्ध में ही विवरण प्राप्त होता है। पुराणों एवं स्मृतियों इत्यादि में यदि प्रसंग आने पर विवशतावश इतर राजाओं के सम्बन्ध में लिखना आवश्यक ही रहा हो तो केवल संकेत मात्र कर दिया गया अथवा उन्हें भी क्षत्रिय के रूप में ही प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। वैद्य कृपाराम अग्रवाल भी इस सत्य को अपने ग्रंथ 'अग्रसेन और अग्रवाल' में इस प्रकार स्वीकार करते हैं "पुराणों की ये शैली है कि उसमें ब्राह्मण क्षत्रिय का ही वृत्त लिखा है।" (पृष्ठ ५) अथर्व वेद में ब्राह्मण को सर्वोच्च कहा गया है तो शतपथ ब्राह्मण में क्षत्रियों को सबसे उत्तम। ब्रह्मा एवं मनु से प्रारम्भ समस्त वंशावलियों में भी केवल क्षत्रिय राजन्यों का ही नामोल्लेख है। क्षत्रियत्व त्यागकर अन्य वर्ग में चले जाने वाले अथवा अन्य राजन्यों का उल्लेख इन वंशावलियों में नहीं है। यदि कहीं ऐसा उल्लेख आ भी गया है तो मात्र यह संकेत देकर कि उसकी वंशावली को वहीं बंद कर दिया गया है।

ऐसा ही हुआ है वर्तमान वराह कल्प में सप्तम मनवन्तर के वैवस्वत मनु के वंशज धनपाल (भागवत में जिसे कुबेर नाम से सम्बोधित किया गया है) के साथ । मनु पुत्र नेदिष्ट का पुत्र नाभाग वैश्य हो गया। उसके पुत्र, पौत्र व प्रपौत्र भलन्दन, वात्सप्रिय तथा मांकील मन्त्रद्रष्टा हुए। इन तीनों के नाम से आज भी वैश्यों के तीन प्रवर प्रचलित हैं।[१] मांकील का पुत्र ही धनपाल हुआ, जिसे वैश्य कर्म तथा नेतृत्व में प्रवीण होने के कारण देवताओं, ब्राह्मणों तथा ऋषियों ने मिल कर प्रतापनगर का राजा तथा बाद में दक्षिण प्रदेश का दिग्पाल नियुक्त किया।[२] भागवत में इसे धनद, धन्धर, कुबेर आदि नामों से वर्णित किया गया है। धनपाल के आठ पुत्र हुए जिनमें सातवां पुत्र वल्ल्भ था। पिता के पश्चात् समस्त पैतृक सम्पति व राज्य का अधिकरी बना। इसी वल्ल्भ के अग्र नाम का पुत्र हुआ जो अग्रवालों का वंशकर्तार हुआ तथा विश्व का सर्व प्रथम समाजवाद एवं ट्रस्टीशिप सिद्धान्त का प्रणेता हुआ। वल्लभ के पश्चात् उसका पुत्र अग्र ही प्रतापनगर का राजा बना। उसने अपने बल बुद्धि व कौशल से अपने राज्य को और भी अधिक प्रसिद्धि प्रदान की। उसके यश से प्रभावित होकर दक्षिणांचल के नागराजा कुमुद ने अपनी पुत्री माधवी का विवाह अग्र

से कर दिया। देवराज इन्द्र इस कारण नाराज होकर अग्र से शत्रुता ठान बैठा तब मां महालक्ष्मी के आदेश से राजा अग्र ने कोलविध्वंसी नागराज महिरथ की पुत्री से भी विवाह कर अपनी शक्ति और बढ़ा ली। साथ ही उत्तर देश में भी उपेक्षित पड़े मरूप्रदेश में अपने नये शक्तिशाली राज्य आग्रेय व नगर अग्रोक की स्थापना कर इन्द्र को भी वश में कर लिया। उससे अप्सरा मधुशालिनी भेंट में प्राप्त कर उससे विवाह किया। अग्र ने अन्य पंद्रह और राज कन्याओं से विवाह कर कुल अठारह राज्यों में मैत्री सम्बन्ध स्थापित किये। महालक्ष्मी व्रतकथा के अनुसार इन अठारह रानियों से प्रत्येक के तीन-२ कुल चौवन पुत्र तथा एक-२ कुल अठारह पुत्रियां हुई।

महाराज अग्र ने अपने राज्य में प्रत्येक नवागन्तुक को प्रत्येक घर से एक ईंट व एक मुद्रा भेंट स्वरूप प्रदान करने की परंपरा प्रारंभ कर समाजवाद के नये युग का समारम्भ किया। आग्रेय राज्य को राजशाही शासन मुक्त जनतांत्रिक गणराज्य का रूप प्रदान कर ट्रस्टीशिप का सूत्रपात किया। इस महामानव ने यज्ञों में जीवबलि का वर्जन कर प्राणी वध मुक्त यज्ञ पद्धति की नींव डाली। अपने वंश को अठारह यज्ञ कर वंशकृत किया। अठारह ऋषियों के नाम से अठारह गोत्रों के नये अग्रवंश को जन्म दिया। अग्रवंश की स्थापना तथा अग्रवालों की उत्पत्ति का यह दिन था आश्विन शुक्ला प्रथमा यथा —

आश्विन शुक्ला प्रतिपदा त्रेता पहले चर्ण।
अग्रवाल उत्पन्न भये कह भाखे शिवकर्ण।

अपने वंश में सगोत्र विवाह को वर्जित कर रक्तशुद्धि की अभिनव परंपरा चलाई। प्रसिद्ध इतिहासकर क्रुक के अनुसार आग्रेय साम्राज्य उत्तर में हिमालय से गंगा यमुना तक विस्तृत था तथा पश्चिम में उसकी सीमाएं मारवाड़ को छूती थी।[३] दक्षिण प्रदेश में प्रतापनगर से कोल्हापुर तक तो उनका राज्याधिकार था ही। इतने विशाल साम्राज्य के संस्थापक उस महामानव अग्र को पुराणकारों ने केवल इसलिए विस्मृत कर दिया कि वह क्षत्रिय नहीं वैश्य था। इस सत्य को मैंने अपनी पुस्तक 'अग्रवंशकर्तार का युग' में प्रमाणित किया है।

धनपाल के आठों पुत्रों की पत्नियां ही अग्रवालों की अष्ट मातृकाएं मानी जाती हैं। महालक्ष्मी व्रत कथा जो भविष्यपुराण के केदारखण्ड के सोलहवें अध्याय में वर्णित है का नायक यही अग्र है जो त्रेता युग का चरित्र है। यह कथा, जैसा कि कथा में ही वर्णित है, ऋषि तोग ने राजा हरिश्चंद्र को सुनाई थी व फिर श्री कृष्ण ने पाण्डवों को सुनाई थी।[४] यह इस ओर स्पष्ट संकेत करते हैं कि इस कथा का नायक अग्र कथाकार व श्रोताओं से बहुत पहले ही हो चुका था और वह धनपाल पुत्र बल्ल्भ का ही पुत्र हो सकता है। डा० स्वराज्यमणि अग्रवाल भी इसे स्वीकार करती है। 'वस्तुत: अग्र सेन की स्थापना जो महालक्ष्मी व्रत कथा में दी है वही सत्य है, सम्भावी है।'[५] यही इसका संपुष्ट प्रमाण है।

धनपाल का यह प्रतापनगर राज्य दक्षिण में विंध्याचल की कोख में बसा हुआ था। ***विंध्य कुक्षी निविष्टाश्च अग्रेन्द्रे च समन्तत:।***[६] इसे ही बाद में दक्षिण का दिक्पाल नियुक्त कर सिंहल देश प्रदान किया गया। इसी ग्रंथ में यह श्लोक इसी ओर इंगित करता है। ***'सिंहलानां पुरी रम्या***

सिद्धयन्ते मंत्र देवता समुद्रतीरे द्वीपेषु सर्वत्र जलाशये।'[७]

महाभारत सभा पर्व अध्याय १२–१६ के अनुसार पाण्डव दिग्विजय के समय १४८ गणों को जीत कर राजसूय यज्ञ में सम्मिलित किया गया, नकुल जो पश्चिम को गया था उसने रोहितक, मरूद, आग्रेय, मालव आदि को विजय किया। सहदेव ने दक्षिण के कोलगिरि (कोलापुर) को विजय किया। इसी प्रकार २० या २५ वर्ष पीछे कर्ण ने इन गणों को जीत दुर्योधन के यज्ञ में सम्मिलित किया।[८] अत: स्पष्ट सिद्ध है कि ये सब गणराज्य महाभारत, पाणिनि व रामायण के समय में उपस्थित थे। बाल्मीकि रामायण में भरत का मातुल गृह से आते हुए आग्रेय गण स्थान में ठहरने का वर्णन है। यह निर्णय वैद्य कृपाराम अग्रवाल दिल्ली का है जो उन्होंने अपनी पुस्तक अग्रसैन और अग्रवाल में प्रतिपादित किया है।

कर्ण द्वारा विजित होकर युद्धाक्रन्त व विक्षत अग्रोहा सम्भवत: उजड़ गया। मरुस्थलीय प्राकृतिक प्रकोपों, आंधी, तूफान, चक्रवातों से प्रभावित होकर शीघ्र ही रेत के टीलों के नीचे दबकर रह गया। इसे कई वर्षों उपरान्त अग्रवंशीय ऐरण गोत्रीय राजा अग्रसेन ने उस मरुप्रदेश की खुदाई करवाकर उजागर किया व पुन: बसाया। इसकी पुष्टि अग्र भागवत के इस श्लोक से हो जाती है।

तस्मिन् बालुका वनस्थाने आग्रेय नाम सा पुरी।
अग्रसेनं पुरा सृष्टा रम्या पुण्य पुरोत्तमम्।।

पाणिनि ने अपने ग्रंथ अष्टाध्यायी में झेलम और व्यास नदियों के मध्य ५०० ग्रामों/ नगरों का नामोल्लेख किया है इनमें आग्रेय जनपद का नाम भी है। इसी ग्रंथ के गोत्रापत्य प्रकरण में अग्रवंश का उल्लेख करते हुए अग्र से निसृत होने वाले अनेक शब्दों यथा आग्रि, आग्रेय, आग्रायण की व्याख्या की है। ये तत्समय तक अग्रवंश, अग्रवाल जाति व आग्रेय गण स्थान के अस्तित्व की पुष्टि है।

महाराज अग्र के अनेक जीवन प्रसंग ऐसे हैं जो उन्हें स्पष्ट रूप से त्रेतयुगीन होना सिद्ध करते हैं। उनकी पटरानी माधवी नागराज कुमुद की पुत्री थी जो दक्षिण प्रदेश में नागवंशी राजा थे। दक्षिण प्रदेश के ही नागराज महिरथ ने कोलपुर के तत्कालीन राजा सुरथ को परास्त कर उसके राज्य पर अधिकार प्राप्त किया जिसके कारण वह कोलविध्वंसी कहलाया। उसी की पुत्री सुन्दरावती से अग्र ने स्वयंवर में विवाह किया। यह कथा मार्कण्डेय पुराण के ४१वें अध्याय में वर्णित है।[१०] ये दोनों ही नाग राजा त्रेता युग में हुये। महाराजा अग्र ने महर्षि गर्ग, जो त्रेतायुगीन महर्षि गर्ग का वर्णन है।[११]

भोजपत्रों पर अदृश्य स्याही से हस्तलिखित ग्रन्थ अग्रोपाख्यानम् जिसे 'अग्रभागवत' नाम से भाषा टीका सहित जन कल्याण पब्लिकेशंस एण्ड मीडिया प्रा० लि०, पोद्धार पार्क, मलाड–ईस्ट, मुंबई से प्रकाशित किया गया है के अध्याय ९ श्लोक ४२ के अनुसार भी आग्रेय नगर महाभारतकालीन अग्रसेन के पहले से ही बसा हुआ था।[१२] यह अग्रसेन भी धनपाल के ही वंश के द्वापर के अन्तकाल के समय में हुए तथा उन्होंने महाभारत में भी भाग लिया था। जनश्रुतियों के अनुसार उनका गोत्र ऐरण बताया जाता है।[१४]

त्रेता युग के परशुराम से युद्ध, विश्वामित्र से पुत्र वरदान प्राप्ति, वासुकि के वंशज दशानन, वीसानन नागों की पुत्रियों से पुत्रों के विवाह, कुबेर की सन्तान होने इत्यादि सम्बंधी अनेक ही जनश्रुतियां अग्रवालों में आज भी प्रचलित हैं जो त्रेता युग में ही अग्रवालों की उत्पति की ओर इंगित करती हैं। अनेकानेक भाटों के गीत भी अग्र व अग्रवंश के त्रेतायुगीन होने की स्पष्ट घोषणा करते हैं। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य है—

वदि मगसिर शनि पंचमी त्रेता पहले चर्ण।
अग्र (सेन) उत्पन्न भये सुन भाषे शिवकर्ण।
त्रेतायुग का प्रथम चरण सुनों उस काल।
जन्मे सूरजवंश मं अग्र (सेन) भूपाल।।
सवालाख घर बसता नगर में ऊपर स्थिर रहे।
राजा अग्र बसायो अग्रोहा एता काम त्रेता किये।

इसी अग्रवंश में द्वापर-कलि के संधि काल में ऐरण गोत्र में महाराजा अग्रसेन का जन्म हुआ। 'उरू चरितम्' के अनुसार महीधर के वंश में वल्लभ के यहां अग्रसेन व षुरसेन का जन्म हुआ। महाराजा अग्रसेन का सम्पूर्ण जीवनवृत 'अग्रोपाख्यानम्' नाम संस्कृत ग्रंथ में संग्रहित है। यह कथा सूतजी के पुत्र उग्रश्रवा ने शौनक आदि ऋषियों को सुनाई तथा उन्हें बताया गया कि नाग यज्ञ से उद्वेलित हुए राजा परीक्षित के क्रोध एवं द्वेष को शांत करने के लिए महर्षि जैमिनी द्वारा उसे यह कथा वृत सुना कर उसके अशान्त हृदय को शान्त किया गया था। महाराजा अग्रसेन ने अपने पिता वल्लभ के साथ महाभारत युद्ध में भी भाग लिया था जिसमें उनके पिता वल्ल्भ वीरगति को प्राप्त हुए थे। यह महाराजा अग्रसेन अहिंसाव्रती व एक पत्नीव्रती थे। इसने भी अठारह अश्वमेध यज्ञ किए व अपना तथा अपने पुत्रों का विवाह नागवंश में किया। ***वासुकी इति ख्यातो वीर्यो विदिशस्य पन्नगधिप। प्रदात नागकन्यका: विधिपूर्वा आग्रसेनायम्।***[१४] अपने पूर्वज के पदचिन्हों पर चलकर अग्र ने यज्ञों में पशु हिंसा का विरोध किया तथा बिना पशु वलि दिए अपने यज्ञ सम्पन्न कराये। राजा होते हुए भी देशाटन कर, नगर-नगर ग्राम-ग्राम का भ्रमण कर समरसता, समानता, सहिष्णुता, ट्रस्टीशिप तथा समाजवाद से समृद्ध अग्र संस्कृति एवं सत्य सनातन धर्म का प्रचार किया एवं जन-जन में नव जागरण का शंख फूंका। इन्होंने १०८ वर्ष की आयु तक राज्य किया तथा पुत्र विभु को राज्य सौंप कर यमुना किनारे तपस्या कर शरीर त्यागा। इस महामनस्वी ने अग्र समाज को नवचेतना का सन्देश देकर नवजीवन प्रदान किया।

इसी वंश में आगे चलकर वि० सं० २५ से ७७ में मध्य दिवाकर अग्रोहा का राजा हुआ, जिसने जैन धर्म स्वीकार कर लिया।[१५] उस समय भारत में कुषाण वंश का प्रादुर्भाव होने लगा था। उसके पुत्र सुदर्शन के काल में ही कुषाणों ने सम्भवत: अग्रोहा पर आधिपत्य कर लिया था। यही कारण है कि अग्रवैश्व वंशानुकीर्तनम् तथा ऊरूचरितम में पराजित सुदर्शन के वंशजों के नाम नहीं दिए गए हैं। दिवाकर की अन्य सन्तानों से छठी पीढ़ी में अग्रचन्द्र का नाम आता है जो इस वंशावली का अन्तिम नाम भी है। इससे यह भी माना जाना उचित प्रतीत होता है कि महालक्ष्मी व्रत

कथा अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम् का रचनाकार इसी अग्रचन्द्र के समकालीन रहा होगा। दिवाकर के काल से गणना करने पर अग्रचन्द्र का काल विक्रम सं० १८७ से २८७ के मध्य आता है। यह समय भारत में भारशिव नागों तथा कुषाणों के संघर्ष तथा कुषाणों के पराभाव का है। इतिहास साक्षी है कि भारशिव नागों में कुषाणों से पराजित राजाओं से वैवाहिक सम्बंध जोड़कर उन्हें सहयोग किया तथा कुषाणों से पराजित राजाओं को पुन: राज्यारूढ़ किया। सम्राट अग्रचन्द्र ने भी इस भारशिव नागवंश की कन्या से विवाह कर उनके सहयोग से अग्रोहा को कुषाणों के आधिपत्य से मुक्त करा पुन: अग्र राज्य स्थापित किया। इसने बिखरे हुए अग्रवंश को पुन: संगठित कर अठारह गोत्र वार संगठनों की पुनर्रचना की तथा पृथक-पृथक गोत्रवार गोत्रधिपति मुखिया नियुक्त किये। इन्हीं गोत्राधिपतियों के नाम समय के साथ महाराजा अग्रसेन के अठारह पुत्रों के नाम से जाने जाने लगे तथा इन्हीं अठारहों को सभी गोत्रों के जनक के रूप में जाना जाने लगा। अग्रवाल महासभा दिल्ली द्वारा प्रकाशित अग्रवाल दरबार के प्राचीन चित्र में महाराजा अग्रसेन व उसके अठारह पुत्रों के यही नाम दिये गये हैं।[१६]

कालान्तर में अग्र, अग्रसेन व अग्रचन्द्र तीनों नाम एक जैसे होने के कारण गड़बड़ होकर एक हो गये तथा केवल एक नाम अग्रसेन प्रचलित हो गया। इन तीनों के ही जीवनवृत अनुश्रुतियों व भाटों के गीतों में मिल कर एक नाम अग्रसेन के नाम से ही जुड़ कर रह गये। यही कारण है कि त्रेता, द्वापर व कलियुगों के पृथक-पृथक वृतांत एक ही चरित्र के साथ जुड़ कर उसके प्रति अविश्वास की स्थिति उत्पन्न करते हैं तथा उसके अस्तित्व को ही नकार कर इस चरित्र को काल्पनिक बताने की भूल इतिहासकार तक कर बैठते हैं।

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, महाभारत, भागवत आदि पुराणों, महालक्ष्मी व्रत कथा, अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम्, ऊरूचरितम्, अग्रोपाख्यानम् (अग्रभागवत) भाटों के गीत, अनुश्रुतियों, अग्रवालों में प्रचलित रीतियों, परम्पराओं, मान्यताओं इत्यादि के आधार पर मेरा यह निष्कर्ष है कि अग्रवंश के प्रथम प्रणेता आदि पुरुष महाराजा अग्र त्रेता युग में हुए। द्वापर युग में श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर व परीक्षित के समय महाराजा अग्रसेन, महाभारत के महा विनाशकारी प्रभाव से उत्पन्न घोर विषाद और दु:ख के कारण हो रहे धर्म के पराभाव के उस संक्रमण काल में सत्य सनातन धर्म एवं अग्र संस्कृति के पुनर्स्थापक तथा प्रचारक के रूप में हुए। कलियुग में कुषाण काल में अग्रवंश के संगठक एवं अग्रोहा के उद्धारक सम्राट अग्रचंद्र हुए। अग्रवंश का यह साम्राज्य यूनानी आक्रांता सिकंदर एवं मुगल आक्रांताओं के समय तक अस्तित्व में था। इसका इतिहास गवाह है। यूनानियों एवं मुगल शहाबुद्दीन द्वारा यहां आगजनी, लूटपाट आदि करने के प्रमाण इतिहास में उपलब्ध हैं। अग्रोहा में हुए अत्यल्प उत्खनन से भी इसकी पुष्टि होती है। अत: हमें अग्रोहा तथा अग्रवंश के इतिहास के सम्बंध में शोधपरक कोई निर्णय लेते समय इस दृष्टिकोण से भी उसका आकलन करना चाहिए।

संदर्भ —

१. भलन्दनश्च वत्सश्च संकीलश्चैते त्रय:।
एते मन्त्रकृतश्चैव वैश्यानां प्रवरा: स्मृता:।। ब्राह्मणपुराण अंश २ अध्याय ३२ श्लोक १२१, १२२ भलन्दकश्च वासश्च संकीलश्चैव ते त्रय:। एते मंत्र कृतोज्ञया वैश्याना प्रवरा: सदा:।। मत्स्यपुराण अध्याय १४५ श्लोक ११६, ११७

२. पहला मनुष्य जो वैश्यों में हुआ उसका नाम धनपाल था जिसे ब्राह्मणों ने प्रताप नगर में राज्य पर बिठा कर धन का अधिकारी बनाया। ब्राह्मण: हितदा श्रैष्ठै: राज्ये प्रस्थापित: स्वयम्। नगरस्य प्रतापस्य: तत: स्वामी ह्यभूतयम्।

३. भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र 'अग्रवालों की उत्पति' पृष्ठ ८
(महालक्ष्मी व्रत कथा के आधार पर)

४. अथ ते कथित राजन व्रतानां व्रतमुत्तमम
यत्कृत्वा श्री हरिश्चन्द्रो लेभे सौख्यं श्रियंनिजाम्।। महालक्ष्मी व्रत कथा।। ६
आदिस्य श्री व्रतं कृष्ण अनुज्ञाप्य च पाण्डवान्
जगाम रथमारूढ़ो माधव: स्वकुशस्थलीम्।। महालक्ष्मी व्रत कथा १२०

५. डॉ० स्वराज्यमणि अग्रवाल 'अग्रसेन अग्रोहा अग्रवाल' पृष्ठ ४९

६. मंजुश्री मूलकल्प पृष्ठ ३२६ श्लोक १२,

७. मंजुश्री मूलकल्प

८. भद्रान रोहितकांश्चैव आग्रेयान मालवान अपि।
गणान सर्वान् विनिर्जित्य नीति कृत् प्रहसिन्नव।।२०
शशकाल यवनांश्चैव विजिग्यै सूतनन्दन:।
नग्नजित प्रमुखंश्चैव गणचिंत्वा महास्था।। महाभारत वनपर्व

९. अग्रभागवत ९/४२

१०. मार्कण्डेय पुराण अध्याय ४१ श्लोक ५,६

११. विष्णुपुराण, द्वितीय अंश, पंचम अध्याय श्लोक २६

१२. तस्मिन बालुका वनस्थाने आग्रेय नाम सा पुरी।
अग्रसेन पुरा सृष्टा रम्या पुण्य पुरोत्तमम्।। अग्रभागवत ९/४२

१३. अग्रवंशकर्तार का युग १२/१०७

१४. अग्रभागवत २०/२७

१५. अग्रवाल इतिहास पृष्ठ १९,२० बिहारीलाल जैन अग्रवाल

१६. अग्रवंशकर्तार का युग पृष्ठ १४२

अग्रवाल भवन,
वाडमेर राजस्थान — ८४४००१

सत्याग्रही क्रान्तिवीर - शोभा राम

रूप शर्मा

हिमाचल प्रदेश में मण्डी स्वतन्त्रता पूर्व एक प्रसिद्ध राज्य था। वर्ष १९०९ ई. का मण्डी राज्य के इतिहास में एक विशेष स्थान है। यह वह ऐतिहासिक वर्ष था जब सत्ता पर बैठे तत्कालीन राजा भवानी सेन का सिंहासन डोलने लगा था। एक नवयुवक शोभा राम ने अपनी समझ बूझ का परिचय देते हुए पीड़ित लोगों को एक संगठित समूह के रूप में मण्डी के पड्डल मैदान में एकत्रित कर अनूठा कारनामा किया था। लगभग आठ दिन तक मण्डी राज्य में प्रशासन राजा के स्थान पर शोभा राम के हाथों में रहा। उस समय लोगों में यह कहावत प्रचलित हो गई थी– ***राज भवानी सेना रा, हुक्म शोभा रामा रा*** मंडियाली की इस कहावत का अर्थ था – राज्य तो राजा भवानी सेन का है, परन्तु आदेश मानेंगे शोभा राम का राजा के प्रति स्वामी भक्ति की यह बात कहने से स्पष्ट होता है कि शोभा राम का। यह आन्दोलन राजा के विरुद्ध नहीं था। वह आन्दोलन द्वारा राजा के बजीर जीवानन्द पाधा, उसके मुन्शी पुरुषोत्तम तथा उसके अन्य भाईयों की लूट के बारे राजा को सचेत करना चाहता था।

शोभा राम मण्डी राज्य के सरकाघाट क्षेत्र में टिक्करी (गधियानी) गांव का निवासी था। उनका जन्म सन् १८८२ में हुआ था तथा सन् १९४४ में वे स्वर्ग सिधार गए थे। उसके पूर्वज बीकानेर (राजस्थान) से इस क्षेत्र में आए थे। इन पूर्वजों में बुद्धवन्त भी एक था। बुद्धवन्त का टीटू नामक पुत्र हुआ। टीटू के फीनू, कालू, साध ओर गुरध्यान चार पुत्र हुए। इनमें गुरध्यान सबसे छोटा था।

उसके शोभा राम और कुनण दो पुत्र हुए। शोभा राम के शेर सिंह नामक पुत्र हुआ जो नि:सन्तान था। शेर सिंह की मृत्यु पर उसकी पत्नी महन्ती के भाई गंगू की पुत्री मथरू के पुत्र मेघसिंह को दत्तक पुत्र बनाया गया। मथरू का विवाह हमीरपुर जिला के उपलब्ध (भोरंज) गांव के रोशन लाल के साथ हुआ था। मेघ सिंह के जन्म के समय १९४४ ई. में शोभाराम की मृत्यु हो चुकी थी। वर्तमान में मेघसिंह ही इस परिवार का उत्तराधिकारी हैं। यह सेना में सेवा करने के बाद प्रदेश शिक्षा विभाग में मुख्याध्यापक के रूप में सेवानिवृत्त हुए हैं।

शोभा राम के दो विवाह हुए थे। इनमें एक पत्नी का नाम धर्मी तथा दूसरी का नाम पूर्वी था। इनमें धर्मी जंधरू गांव के निवासी सिद्धू की पुत्री थी। सिद्धू के दो पुत्रियां थी। दूसरी पुत्री का नाम दुरू था। इनमें दूरू का विवाह शोभा राम के अनुज कुनण के साथ हुआ। कुनण नि:सन्तान था। सिद्धू के गुलजारी नामक पुत्र शेर सिंह, राम सिंह, नरैण, दीधू ओर रेलू नामक पांच पुत्र हुए। शेर सिंह के प्रताप सिंह और पंजाब सिंह तपवाल पुत्र हुए। इनमें पंजाब सिंह तपवाल सरकाघाट का प्रमुख अधिवक्ता है। राम सिंह के कृष्ण और डी.डी.ठाकुर तथा कृष्ण चन्द के राकेश तपवाल पुत्र पैदा

हुए। वह वर्तमान में वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला मसेरन में प्रधानाचार्य है।

राजपूत शोभा राम बनेर राजपूत था। उस समय सरकाघाट क्षेत्र में बान का घना वन था। यह वन शोभा राम के गांव तक विस्तृत था। इसे चन्द्राकड़ी वन कहते हैं। इस वन के मध्य एक पहाड़ी पर किला था। उस समय यहां के निवासियों को कलाडुआ भी कहते थे। कलाडु वीर योद्धा थे। वह दबंग थे तथा राजा भी उनका लोहा मानता था। इन कलाडुओं के कारण इस क्षेत्र को बागी तहसील भी कहा जाता था। बाद में १९१७ में बागी तहसील की विधिवत स्थापना कर इसका नाम सरकाघाट तहसील रखा। इस परिवार का प्रारम्भ से ही समीपवर्ती क्षेत्र में दबदबा था। इनमें कई नवयुवक सेना में अपने शौर्य का परिचय दे चुके हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् इस परिवार के कई सदस्य केन्द्रीय तथा प्रादेशिक सेवाओं में रहे।

उस समय राजा विजय सेन मण्डी का शासक था। राजा विजय सेन के समय मण्डी राज्य के बजीर और कर्मचारी राजकोष को लूटने तथा किसानों को पीड़ित करने में लगे थे। इनमें पाधा जीवानन्द भी था। यह लोग किसानों की भूमि को हड़प रहे थे। खेतीहर किसान को कनैत कहा जाता था तथा उन्हें भूमि का स्वामित्व प्राप्त नहीं था। बेगार प्रथा का प्रचलन जोरों पर था। किसान को उपज का मात्र एक तिहाई भाग मिलता था। शेष उपज को राज्य के बजीर और उनके एजैण्ट हड़प जाते थे। राजस्व न देने पर भूमि छीनकर दूसरे किसान को दी जाती थी।

१९०२ ई. में विजय सेन की मृत्यु हो गई तथा भवानी सेन राजगद्दी पर बैठा, परन्तु उसे शासन के अधिकार १९०३ ई. में प्राप्त हुए। इस अवधि में बजीर जीवानन्द की प्रशासन पर पूरी पकड़ हो चुकी थी। वह अशिक्षित था। परन्तु उसकी अंग्रेज सरकार में गहरी पहुंच थी। उसका मुन्शी पुरुषोत्तम धूर्त और अत्याचारी था। उसने अपने एक भाई बलिराम को राज्य का सेनापति बनाया हुआ था। एक भाई बन्दूक बेचने का काम करता था। ये सभी लोग भ्रष्टाचार में डूबे हुए थे।

तभी १९०८ ई. में वर्षा का अभाव रहा। उस समय चावल एक रुपए के साढ़े पांच सेर लगभग पांच किलोग्राम बिकते थे। अकाल की सम्भावना अनुभव करते ही पाधा जीवानन्द, मुन्शी पुरुषोत्तम की जुण्डली ने किसानों को डरा धमका कर एक रुपए के ग्यारह सेर (लगभग दस किलोग्राम) चावल क्रय कर अपने गोदाम भर लिए। जब अकाल पड़ा तो वहीं चावल इस जुण्डली ने दोगुने भाव से बेच डाले। जनश्रुति के अनुसार इस काले धन्धे में पाधा जीवानन्द ने लगभग ७०००० रुपए का शुद्ध लाभ प्राप्त किया था।

उस समय सरकारी कामकाज की भाषा फारसी थी। फारसी पढ़ने के लिए शोभा राम १९०५ ई. में लखनऊ गया। वह तीन वर्ष के पश्चात् वापस घर पहुंचा। उसने लोगों से भ्रष्ट वजीर के काले कारनामें सुने। वह उस समय २६ वर्ष का नवयुवक था। उसने खलिहान से बजीर के लोगों को उपज झपटते देखा, उसने बेगार देते लोगों की पीड़ा को स्वयं अपनी आंखों से देखा। इस अत्याचार के उसके पिता और गांव के अन्य लोग भी शिकार थे। उसने देखा कि इस अत्याचार का उत्तरदायी वजीर पाधा जीवनन्द था। राजा भी उसके चंगुल में बेबस था। शोभा राम ने इन अत्याचारों का विवरण देते हुए राजा को पत्र लिखे, परन्तु अधिकारियों ने उन पत्रों को राजा तक नहीं पहुंचने दिया।

शोभा राम इससे व्याकुल हो गया। उसने मण्डी राज्य के विभिन्न क्षेत्रों का दौरा कर बजीर और उसके एजैन्टों के काले कारनामों का सही विवरण एकत्रित किया। सिर पर पगड़ी, लखनवी अचकन और चूड़ीदार पाजामा उसके व्यक्तित्व का प्रभावशाली आकर्षक पहनावा था। वह घोड़े पर सवार होकर कन्धे पर बन्दूक रखकर जब चलता था तो राजा के कर्मचारी भयभीत हो जाते थे। वह सितम्बर १९०२ से लेकर दिसम्बर १९०८ तक के समय में पूरे मण्डी राज्य का भ्रमण करता रहा तथा राजा को बजीरों के बारे में सही विवरण देता रहा, परन्तु राजा के कर्मचारियों ने इन प्रयासों को सफल नहीं होने दिया। इसी मध्य शोभा राम को चौन्तड़ा क्षेत्र का लाल सिंह मिला। वह भी बजीर के अत्याचारों से दु:खी था।

वर्ष १९०९ के आरम्भ में लोहड़ी के पर्व पर शोभा राम के नेतृत्त्व में बीस व्यक्तियों का एक दल मण्डी में राजा से मिलने गया। राजा के कर्मचारियों ने इस दल को राजा से मिलने नहीं दिया। इससे शोभा राम निराश नहीं हुआ। उसने फरवरी में ४० व्यक्तियों का दल संगठित कर पुन: पड्डुल मैदान में पहुंचकर राजा के कर्मचारियों से राजा को मिलाने की प्रार्थना की। शोभा राम ने कहा कि उसके इस प्रयास का अर्थ राजा का विरोध करना नहीं, अपितु वह राजा को भ्रष्टाचार के विरुद्ध सचेत करना चाहता है। इस बार भी उसे राजा से मिलने नहीं दिया गया। शोभा राम ने तीसरी बार पुन: राज्य के विभिन्न क्षेत्रों से कार्यकर्ता संगठित कर मार्च १९०९ में २०० व्यक्तियों का दल एकत्रित कर राज से मिलने का प्रयत्न किया। इस बार भी यह प्रयास असफल रहा।

मई १९०९ ई. में शोभा राम ने चार सौ कार्यकर्त्ताओं का दल एकत्रित कर एक बार फिर राजा से मिलने मण्डी पहुँचा। इस बार राज्य कर्मचारियों ने कई आन्दोलनकारियों के साथ मारपीट की तथा उन्हें पड्डुल मैदान से खदेड़ दिया।

जून १९०९ ई. में शोभा राम ने करो या मरो का नारा देते हुए राजा से मिलने का निश्चय किया। उसने गदियाणी क्षेत्र से ५७२ व्यक्तियों का दल संगठित कर मण्डी कूच किया। पहला पड़ाव बल्ह के डोटे रा मैदान में डाला गया। रास्ते में कई नवयुवक इस दल में सम्मिलित होते गए। दूसरी रात को यह जन समूह गुटकर पहुँचा। हर ओर से उत्साहित युवक शोभा राम के साथ जुड़ते गए। १२ आषाढ़ सम्वत् १९६६ अर्थात् २६ जून, १९०९ को यह दल मण्डी के पड्डुल में पहुंच गया। यहां चौन्तड़ा, द्रंग, चुहार, सिराज क्षेत्र से आए सैंकड़ों अन्य लोग एकत्रित हो गए। इस तरह पड्डुल में २००० के लगभग कार्यकर्त्ता एकत्रित हुए।

भारी संख्या में आन्दोलनकारियों के मण्डी नगर के समीप एकत्रित होने के समाचार से राज दरबार में दहशत पैदा हो गई। राजा ने तत्काल लाहौर को तार भेजकर मदद भेजने का आग्रह किया। इसी मध्य आन्दोलनकारी भड़क उठे। उन्होंने तहसीलदार हरदेव सिंह, मीरी नेगी, शहर कोतवाल को गिरफ्तार कर जेल में बन्द कर दिया। हर तरफ शोभा राम का डंका बज रहा था। पाधा जीवानन्द थर-थर काम्पता हुआ तल्याड़ की ओर भाग गया। उसके साथी हिरणाकस और देवी दित्ता इधर-उधर छुपने लगे। मुन्शी पुरुषोत्तम भी भाग गया।

इस बारे धर्मपुर उप मण्डल के अन्तर्गत बडियार गांव के अस्सी वर्षीय गीतकार मेहरूदीन खान ने अपने एक गीत में विवरण दिया है —

देखिए गढ़ नन्दपुर के हाल,
किला चन्द्राकड़ी बण बेतमाम्
उत्थे बस्से बनेर गुरध्यान
उसका लड़का इक शोभाराम
पढ़ा ताजी रात हिन्द,
सीटी बजाई कट्ठा किता ५७२ जवान
वहां से चक्का डेरा
लाया डोटे रा मदाना
शोभे रामे रा कलाडुआ
आया मण्डी रे बाले,
गुटकर रे बाले
चक्की चरखड़ी हलाई
मियां लाल सिंह कहना लगा
खरे-खरे बलद लूटे
सुई री लुटी गाईं
चान्दी सुना सब लुटिया
पूजा मण्डी जाई
अजे वी बोलां
सलगणू लैणे पाई
ढाई घन्टे राज
बैठी गेआ तख्ता पर
हाड़ा रे १२ गते
पकड़ियां हिरणाकस, देवी दिता
अग्गे टूटी टंग वाला हाकम
वजीर जीवानन्द
उसरा मुन्शी पुरुषोतम राम
रिश्वत खादी बेतमाम
राजा आया
हत्था जोड़े
तेरा मुकाबला मैं नी करदा
तेरा इनसाफ मैं करदा
तां शोभा राम हटिया
तहसीला रा नौं रखिया बागी।

मण्डयाली के इस गीत में शोभा राम के अनूठे आन्दोलन की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। इस गीत के अनुसार गुरध्यान बनेर राजपूत था। उसका गांव चन्द्रकड़ी बन के अन्त में था। गुरध्यान का पुत्र शोभा राम था। वह फारसी पढ़ा हुआ था। उसने ५७२ नवयुवकों का एक दल बनाकर मण्डी नगर की ओर प्रस्थान किया। पहला पड़ाव बल्ह क्षेत्र के डोटे रे मैदान में तथा दूसरा गुटकर में डाला। यहां मियां लाल सिंह ने बजीरों के दमन, अत्याचार और भ्रष्टाचार का पर्दापाश किया। उसने कहा कि बजीर जीवानन्द के एजैण्टों ने किसानों के अच्छे-अच्छे बैलों को छीन लिया। दूध देने वाली गाएं लूट ली, चांदी-सोना लूट लिया।

अन्त में यह आन्दोलनकारी भारी संख्या में पड्डुल पहुंच गए। आषाढ़ १२ प्रविष्टे को शोभा राम मण्डी के पड्डुल में पहुंचा। इस दल ने हिरणाकस, देवी दित्ता, जीवानन्द पाधा, मुन्शी पुरुषोतम आदि को बन्धक बना लिया तथा राजा को उनके कारनामों की जानकारी दी । राजा ने सारी बातें सुनकर हाथ जोड़े तथा शोभाराम को पूरा न्याय दिलाने का वादा किया। भ्रष्ट जीवानन्द पाधा को पद से हटा दिया गया।

यह घटना १२ आषाढ़, १९६६ विक्रमी सम्व् की है। राजा ने शोभाराम से आग्रह किया कि उसे न्याय करने का समय दिया जाए। इसी मध्य राजा ने लाहौर को अंग्रेजी सरकार से मदद हेतु तारें भेजी। सूचना मिलते ही अंग्रेजी सरकार ने कांगड़ा के उपायुक्त तथा कुल्लू के सहायक आयुक्त का तत्काल राजा भवानी सेन की मदद करने का आदेश दिया। कुछ दिन बाद में जालन्धर मण्डल के आयुक्त कर्नल एच.एस. डायरज भी मण्डी पहुंच गया। यहां उन्होंने देखा कि आन्दोलनकारी पूरी तरह शान्त थे तथा सेना की मदद की कोई आवश्यकता नहीं थी।

इस तरह आठ दिन बीत गए। शोभाराम और उसके साथी पड्डुल मैदान में डटे रहे। राजा ने उनके खान-पान की पूरी व्यवस्था की थी। इस अवधि में कोई अप्रिय घटना नहीं हुई। आठवें दिन लोग भड़क गए। उन्होंने तहसीलदार हरदेव सिंह, मीरी नेगी ओर शहर कोतवाल को बंदी बना दिया। चारों ओर शोभा राम का डंका बजने लगा। कर्मचारी राजा की सुरक्षा छोड़कर शोभा राम के आगे नतमस्तक होने लगे। चारों ओर एक ही आवाज थी – ***राज भवानी सेना रा, हुक्म शोभा रामा रा।***

इस बारे मण्डी राज्य का इतिहास के लेखक मनमोहन सिंह जो स्वयं शोभा राम से मिला था, लिखता है कि शोभाराम का आन्दोलन पूरी तरह शान्त था तथा शोभा राम कहता था कि वह राजा का विरोधी नहीं। वह राजा को बजीरों के भ्रष्टाचार के विरुद्ध सचेत करना चाहता है। राजा जीवानन्द वजीर के आगे लाचार था। इस घटना की पुष्टि पाधा जयदेव ने भी की थी। पाधा जयदेव को राजा भवानी सेन ने पाधा जीवानन्द के बाद अपना प्रमुख सलाहकार मनोनीत किया था।

इसी पुस्तक में पृष्ठ १३५ में योग्य लेखक ने इस अनूठे आन्दोलन का वर्णन किया है। लेखक के अनुसार जीवानन्द ने भ्रष्ट कदम उठाते हुए भूमि हथिया ली थी। उस समय सरकाघाट क्षेत्र के सन्धोल, बलद्वाड़ा आदि क्षेत्रों की उपजाऊ भूमि पण्डी के खत्रियों या वजीरों के पास थी। कहते हैं कि जीवानन्द सत्ता के मद में पागल हो गया था। जैसा वजीर वैसे उसके कर्मचारी थे। इस वजीर के रिश्तेदार तथा परिजन ऊँचे पदों पर थे। वह काम नहीं, अपितु धन ऐंठने में लगे थे।

उदाहरण के रूप में उसने अपने एक भाई को ऊँचे पद पर बैठाया। उसका काम मात्र विशेष अवसर पर गोली चलाने वाली बन्दूकों की गिनती करना था। गोली मात्र सलामी के समय चलाई जाती थी तथा इसकी आवश्यकता एक मास में दो या तीन बार होती थी।

शोभा राम के आगे झुकते हुए राजा भवानी सेन ने आठवें दिन पड्डल में खुला दरबार लगाया। इसमें पूरे राज्य से ६००० के लगभग लोग एकत्रित हुए। राजा ने इस दरबार में बजीर पाधा जीवानन्द को पदच्युत करने की घोषणा की तथा स्वर्गीय वजीर उत्तम सिंह के पुत्र मियां इन्द्र सिंह को अपना वजीर और पाधा जयदेव को प्रमुख सलाहकार बनाया। लोग अपनी मांगें पूरी होने पर ही अपने घरों को लौटे। अभी इस आन्दोलन को शान्त हुए मात्र एक मास भी नहीं हुआ था कि राजा ने दुष्ट लोगों के बहकावे में आकर कुछ लोगों को बन्दी बना लिया। इसी मध्य राजा ने कुटलैटड़ राज्य के राजा के पुत्र टीक्का राजेन्द्र पाल को अपना सलाहकार तथा मुन्शी अमर सिंह को नया बजीर बनाया। टीक्का राजेन्द्र पाल ने विवेक से कार्य लेते हुए राजा से बन्दी बनाए लोगों को मुक्त करने को कहा।

राजा भवानी सेन की एक रानी ललित कुमारी थी। वह अवध क्षेत्र के खैरागढ़ी राज्य के राजा की पुत्री थी इसलिए प्रजा में वह रानी खैरगढ़ी के नाम से प्रसिद्ध थी। उसने शोभा राम को अपनी सुरक्षा सेना में नियुक्त करने के लिए राजा को प्रेरित किया। परन्तु शोभा राम ने कोई भी पद लेने से इन्कार कर दिया। उसे राजा ने सरकाघाट के समीप जागीर देने का भी प्रयत्न किया। स्वाभिमानी शोभा राम ने इसे भी स्वीकार नहीं किया।

शोभा राम अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने वाले लोगों का प्रेरणा स्रोत बन गया। यही कारण है कि उसके आन्दोलन के दो वर्ष बाद बल्ह में सिद्धू खरवाड़ा ने वनों को लेकर आन्दोलन किया। शोभा राम की तरह सूझ-बूझ और संगठनात्मक कमी के कारण यह आन्दोलन सफल नहीं हो सका। भारतवर्ष के स्वतन्त्रता संघर्ष में महात्मा गांधी के सत्याग्रह आन्दोलन की विशेष भूमिका रही है। ऐसे आन्दोलन की आधारशिला शोभा राम ने मण्डी राज्य में बहुत पहले सफलतापूर्वक स्थापित की थी। इस प्रकार सत्याग्रही क्रान्तिवीर के रूप में शोभा राम का नाम मण्डी राज्य के इतिहास में सदा अमर है।

लोअर बाजार,
बलद्वाड़ा, जिला मण्डी (हि.प्र.)
मो. : ९८१६०—०३१०७

स्थान वृत्त

गौरवशाली उज्जयिनी

ललित शर्मा

भारत के हृदय स्थल मध्यप्रदेश की पौराणिक और सांस्कृतिक नगरी महाकालपुरी अर्थात् उज्जयिनी प्राचीन और संवत् प्रवर्तक वीर विक्रमादित्य की राजधानी होने तथा कालजयी महाकालेश्वर शिव को अपनी गोद में प्रतिष्ठित कर सम्पूर्ण प्राचीन विश्व का मध्य स्थान होने का गौरव प्राप्त कर चुकी है। वेदों से महाकाव्यों तथा सभी पुराण ग्रंथों में इस प्राचीन और गौरवशाली नगरी की गरिमा का यशोगान गाया गया है। यहाँ के सन्दिपनी गुरु के आश्रम में शिक्षा प्राप्त की थी भगवान श्रीकृष्ण ने और फिर दिया था विश्व को गीता का अभिज्ञान। कवि कुलगुरु कालिदास और महाकवि बाण की अद्‌भुत वाणी इसी पुरी में जागी थी और यहीं विकसित हुआ था वराहमिहिर के ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान।

धार्मिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से इस समृद्धशाली नगरी की गणना सप्त महापुरियों, द्वादश ज्योतिर्लिंगों तथा विख्यात चार कुम्भों की स्थली में प्रमुखता से होती है। उज्जयिनी अनादिकाल से ही अनेक यशस्वी राजवंशों की शासित स्थली रही है। इसी के साथ यह नगरी अनेक महापुरुषों-संतों की आश्रय-प्राश्रय और तपोस्थली भी रही है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, लक्ष्मण तथा सीता व पुत्र लव-कुश, भक्त प्रहलाद, काकभुशुण्डि, महर्षि अगस्त्य, लोपामुद्रा, महावीर स्वामी, योगीराज भर्तृहरि, पीर मछंदरनाथ आदि की जहाँ एक ओर यह नगरी स्वागत व तपोस्थली रही है, वहीं दूसरी ओर इसकी गोद में चक्रवर्ती सम्राट कार्तवीर्य अर्जुन, विंद—अनुविंद, चंड—प्रद्योत, सम्राट अशोक, वीर विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त द्वितीय सहित परमार व मराठा आदि शासकों ने भी राज्य किया था। कला, साहित्य व संस्कृति के माध्यम से इसे देवराज इन्द्र की अलकापुरी की भांति संवारा था। तभी तो यहाँ के बाजारों में विशाल रत्न राशि एकत्रित देखकर महाकवि कालिदास ने कहा था, "मानो रत्न-सागर के सारे रत्न ही इस नगरी में एकत्रित हो गये हों और सागर में रत्नों के स्थान पर जल ही शेष रहा गया हो।"

उज्जयिनी पर्वतराज विध्यांचल के मनोरम अँचल में सागर की सतह से १६१८ फीट की ऊँचाई के मालवी पठार पर पुण्य सलीला सदानीरा शिप्रा नदी के दक्षिणी तट पर बनी हुई है, जो आज भी भारतीय संस्कृति का जीवन्त प्रमाण है।

काल मानक की गौरव स्थली : मेरु—स्थान अर्थात् उत्तरी ध्रुव की स्थिति पर चैत्र मास के ८—९ प्रविष्टे (२१ मार्च) से प्राय: ६ मास का दिन होने लगता है। इस प्रकार ६ माह के दिन के ३ मास बीत जाने पर सूर्य दक्षिण में क्षितिज से अत्यन्त दूरी की ऊँचाई पर चला जाता है। वराह मिहिर के अनुसार ८—९ आषाढ़ (२१ जून) को उस समय सूर्य उज्जयिनी के ठीक मस्तक (उज्जयिनी से गुजरी कर्क रेखा पर स्थित कर्कराजेश्वर शिव) पर आ जाता है, तभी इसका अक्षांश और सूर्य की

परम क्रांति २४ अंश हो जाती है। इस समय कर्कराजेश्वर मंदिर की छाया कुछ क्षणों के लिये पृथ्वी पर नहीं गिरती। सूर्य के ठीक मस्तक पर स्थित उज्जयिनी के सिवाय विश्व में यह गौरव किसी अक्षांश पर प्राप्त नहीं होता है। ऐसी प्राकृतिक अद्‌भुत और भौगोलिक विशेषता के कारण उज्जयिनी ही एक ऐसा स्थान है, जहाँ से मानक काल (समय) का प्रामाणिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इसी कारण उज्जयिनी को ग्रीनविच माना गया। काल ज्ञान की ऐसी प्राकृतिक विशेषता के कारण ही यहाँ के प्रधान देवता का नाम "महाकाल", हुआ, जिसे बाद में ईश्वर रूप में समाविष्ट किया गया।

इस प्रकार जहाँ आकाश में सूर्य मस्तक पर उज्जयिनी में ही आता है और खगोल में ठीक उसे मध्यवर्ती स्थान प्राप्त करने (भूमध्य रेखा पर) का गौरव प्राप्त है। उसी प्रकार भौगोलिक स्थिति से भी यह नगरी सारे देश का मध्य स्थान रही है। वैदिक संहिता में इसे इसी कारण "अमृतस्य—नाभि" व योगशास्त्र में इसे "मणिपुर चक्र स्थली" कहा गया है। आकाश में ही नहीं, अपितु धरती पर भी मध्यस्थ का स्थान प्राप्त होने के कारण, जो असाधारण महत्त्व उज्जयिनी को प्राप्त है, वह दुनिया में किसी भूमि-खण्ड को प्राप्त नहीं है। लंका से सुमेरु पर्यन्त जो भूमध्य रेखा गयी है, उसे जहाँ एक ओर भूमि-खण्ड को प्राप्त नहीं है। लंका से सुमेरू पर्यन्त जो भूमध्य रेखा गयी है, उसे जहाँ एक ओर महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग पर से गुजरने को बाध्य होना पड़ा है, वहीं कर्क रेखा को भी इसी ज्योतिर्लिंग के निकट स्थित "कर्कराजेश्वर शिवलिंग" पर से गुजरना होता है। ऐसी मध्यवर्ती भूमि व आकाश की स्थिति पर महाकालेश्वर की अनादि युगीन स्थापना का अर्थ काफी गंभीरता लिए हुए है। इस नगरी ने इस प्रकार एकात्म वैविध्य से देश-विदेश को जो काल की मानक-गणना (स्टेण्डर्ड टाईम) की सुविधा प्रदान की है, विश्व उसका सदैव ऋणी रहेगा।

उज्जयिनी में हिन्दी के प्राचीन काव्यशास्त्र के विद्वान आचार्य "राममूर्ति त्रिपाठी, इतिहासकार डॉ. श्यामसुन्दर निगम और कलाशैली के अन्वेषक डॉ. नर्मदा प्रसाद उपाध्याय की एकात्म मान्यतानुसार उज्जयिनी और महाकालेश्वर के इस अद्‌भुत प्राकृतिक और भौगोलिक महत्त्व को यदि वास्तव में देश ने वैज्ञानिक दृष्टि से सोचने और उसे क्रियान्वयन करने का प्रयास किया होता, तो मंगल की निकटता, चुंबकीय (आणविक) शक्ति, प्रलय और सृष्टिक्रम की गुत्थी को सुलझाने में काफी सहायता प्राप्त होती। गौरवशाली उज्जयिनी के धार्मिक, सांस्कृतिक स्थल इस प्रकार हैं :—

श्रीमहाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग

श्रीमहाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग की गणना भारत के द्वादश और सबसे बड़े ज्योतिर्लिंगों के रूप में की जाती है। तभी तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत आकाश-पाताल तथा भू-लोक (मृत्युलोक) में इसका विशेष महत्व माना गया है। "स्कन्दपुराण" के अवंति खण्डानुसार :—

आकाशे तारक लिंगं, पाताले हाटकेश्वरम्
मृत्युलोके महाकालं, लिंग त्रय नमोऽस्तुते। —*(कल्याण, तीर्थांक, १९५७)*

उज्जयिनी की एक और विशेषता यह है कि निम्न श्लोक में वर्णित पाँच बातों का यहाँ महायोग है

श्मश्मनभुर्वरं क्षेत्रं पीठं तु वनमेव च।
पंचकैत्र न लभ्यते महाकाल वनादृते।। —*(कल्याण, तीर्थांक, १९५७)*

अर्थात् उज्जयिनी में शमशान (शिव का रमण स्थान, जहाँ मोह, माया, मद का नाश होता है); भुर्वर, जहाँ मृत्यु होने पर मोक्ष प्राप्त होता है। क्षेत्र जहाँ पापों का विनाश होता है। पीठ, जहाँ देवी हरसिद्ध व महाकाली तथा अन्य सप्त मातृकाओं का स्थान है और महाकाल (शिव) का जहाँ वास है; ऐसी पाँच विशिष्ट बातों का योग पृथ्वी के भू-पृष्ठ पर सिवाय उज्जयिनी के अतिरिक्त कहीं नहीं है। पुराणों की मान्यता के अनुसार भगवान शिव ने त्रिपुर नामक राक्षस का वध यहाँ महाकाल वन में प्रचंड रूप में किया था और यहीं पर वे भक्तों की प्रार्थना पर महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रतिष्ठित हो गये थे। यहाँ श्रीमहाकालेश्वर की लिंग मूर्ति दक्षिणामुखी है, जो तांत्रिक धारण के अनुकूल है। भगवान महाकालेश्वर श्मशानवासी है, अत: इस ज्योतिर्लिंग पर प्रतिदिन ब्रह्ममुहूर्त में डमरू निनाद के साथ ताजा चिता-भस्म से पूजन, त्रिपुंड तथा सुन्दर श्रृंगार किया जाता है। इस दर्शन से भक्तों को अकाल मृत्यु का भय नहीं रहता है। महाकालेश्वर की स्थापना से चार-चार कोस की दूरी का क्षेत्र महापापों का विनाश करने वाला है। इस नगरी के राजाधिराज महाकालेश्वर है।

देश के असंख्य भक्तों के श्रद्धाधाम श्रीमहाकालेश्वर का मंदिर भव्य और विशाल है। मंदिर के समुन्नत शिखर पर लगा धर्म-ध्वजदण्ड नीले आकाश में झाँकते देवी-देवताओं को आमंत्रित करता जान पड़ता है। आकाश-पाताल के मध्य मंदिर के मूल गर्भगृह में विराजमान यह पावन ज्योतिर्लिंग सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के निराकार स्वरूप को प्रतिपादित करता है। श्रीमहाकालेश्वर की यह लिंगमूर्ति चांदी की नक्काशी से परिपूर्ण जलपात्र के मध्य में प्रतिष्ठित और नागवेष्ठित है, जिसके तीनों ओर पार्वती, गणेश एवं कार्तिकेय की प्रतिमाएं स्थापित हैं तथा सम्मुख ही नंदी की सुन्दर प्रतिमा भी। इन सभी की पूजा-अर्चना दिन में प्रात: भस्म पूजा, मध्य में महापूजा तथा प्रदोषकाल में प्रदोष पूजा होती है।

इस मंदिर का निर्माण "स्कन्दपुराण" के अनुसार देवशिल्पी विश्वकर्मा ने किया था, जो द्वापर युगीन बाबा नंद से तीन पीढ़ी पूर्व का माना गया है। बाद में सम्राट विक्रमादित्य ने इसे १२१ स्फटिक के खम्बों से युक्त करवा कर १२१ गज का निर्माण करवाया था, जिसका आंतरिक भाग रत्नों से जगमगाता था। मंदिर में सर्वत्र रत्नजड़ित दीप थे, जो प्रकाशमान रहते थे तथा मुख्य द्वार पर बड़ा स्वर्णयुक्त घण्टा लटकता था। ग्यारहवीं शती में भोज परमार राजा व १७वीं सदी में दीवान बाबा रामचन्द्र शेणवी ने इसका जीर्णोद्धार करवाया था, वही इसका वर्तमान स्वरूप है।

श्रीमहाकालेश्वर मंदिर तीन खण्डों में विभक्त है, जिसमें प्रथम खण्ड में श्री नागचंद्रेश्वर, द्वितीय में ओंकारेश्वर और अंतिम भूतल खण्ड में स्वयं भगवान श्रीमहाकालेश्वर विराजमान हैं। प्रति सोमवार, महाशिवरात्रि व अन्य धार्मिक त्यौहारों पर यहाँ की शोभा अवर्णनीय रहती है। सिंहस्थ (कुम्भ) पर्व पर तो देश-विदेश के लाखों श्रद्धालुओं, महात्माओं व पर्यटकों की यहाँ काफी भीड़ रहती है।

हरसिद्धि देवी

यह देवी विक्रमादित्य की आराध्या देवी रही है। वे इन्हें गुजरात से यहाँ लाये थे। विक्रम ने ११ बार अपने मस्तक को इन्हीं देवी के समक्ष काटकर चढ़ाया था। हरसिद्ध देवी का मंदिर भव्य एवं विशाल है। मध्य में देवी की चमत्कारी प्रतिमा स्थापित है। देवी सती का वक्षस्थल यहाँ गिरने के कारण यह सिद्धपीठ भी है। मंदिर में अन्नपूर्णा व महाकाली की चित्ताकर्षक प्रतिमाएं हैं। यहाँ अखण्ड ज्योति प्रज्ज्वलित रहती है। मंदिर के ठीक सामने दो विशाल दीप स्तम्भ हैं। नवरात्रि के समय जब इन पर दीपक प्रज्जवलित किये जाते हैं, तब स्वर्ण की भांति उनकी ज्योति झिलमिलाती है। हजारों श्रद्धालु इस सुंदर शोभा को देखते हैं।

मंगलनाथ

उज्जयिनी का मंगलनाथ मंदिर ज्योतिशास्त्र के अनुसार मंगल ग्रह का जन्म-स्थल है। यहीं से प्रथम बार हिन्दुओं ने भूगोल को समझा था। ज्योतिषियों का मानना है कि मंगल ग्रह का तारा इसी मंदिर के ऊपर रहता है। खगोल की दृष्टि से यह स्थान अति महत्वपूर्ण है। स्कन्दपुराण के अनुसार यहाँ शिव ने अंधकासुर का वध किया था, जिससे शिव के ललाट से पसीने की बूँद यहाँ गिरी तथा अंगारक (मंगल) ग्रह की उत्पत्ति हुई और वह शिव-पुत्र कहलाकर यहाँ स्थापित हुआ।

मंगलनाथ का मंदिर शिप्रा नदी के तट पर स्थित है। मंदिर के मध्य में मंगलेश्वर महादेव की सुंदर लिंगमूर्ति स्थापित है। मंदिर व उसके आस-पास की शोभा नैसर्गिक है। प्रति मंगलवार, सोमवती अमावस्या तथा वैशाख पूर्णिमा पर यहाँ विशाल मेला लगता है।

गढ़कालिका देवी

यह देवी कवि कालिदास की आराध्या रही है। उन्होंने इसी स्थान पर दैवीय प्रेरणा पाकर विश्वविश्रुत साहित्य रचा था। इस मंदिर में देवी कालिका की सुंदर और आदमकद प्राचीन प्रतिमा है। प्रति सोमवार, शिवरात्रि व नवरात्रि में यहाँ की शोभा अवर्णनीय होती है।

भर्तृहरि की गुफा

योगीराज भर्तृहरि सम्राट विक्रमादित्य के भाई थे। उक्त मंदिर के निकट इनकी एक सुंदर गुफा दर्शनीय है, जिसमें नाथ पंथ के इस महान योगी की समाधि है। यह स्थल भारतीय नाथ सम्प्रदाय का विशिष्ट पीठ है। समाधि पर उनके चिमटे, धूनी, कमंडल हैं।

काल भैरव

पुराणों में प्रमुख अष्ट-भैरव में यह काल-भैरव सबसे बड़े माने जाते हैं। इस मंदिर में काल भैरव की प्रतिमा अत्यन्त आकर्षक और दर्शनीय है। यह प्रतिमा चमत्कारी भी है। इसके मुख में किसी प्रकार का छिद्र न होने पर भी मदिरा युक्त पात्र इनके मुख पर लगाने से रिक्त हो जाता है। अनेकों विदेशी अन्वेषक यहाँ परीक्षण करने के उपरान्त भी इस रहस्य को नहीं जान पाये। काल-भैरव का मंदिर परमार राजा भद्रदेव ने १०वीं सदी में बनवाया था। मंदिर प्राँगण में २५ फीट नीचे भूगर्भ में पाताल भैरवी का मंदिर है।

सन्दीपनी आश्रम

प्रख्यात गुरु सन्दीपनी प्राचीन उज्जयिनी के वासी थे। यहाँ उनका आश्रम श्रेष्ठ विद्या-केन्द्र

के रूप में प्रख्यात था। भगवान कृष्ण, बलराम और मित्र सुदामा ने इसी आश्रम में शिक्षा प्राप्त की थी। यहाँ जल का छोटा-सा कुण्ड "अंकपात" है, जहाँ श्रीकृष्ण ने अपनी लिखने की पट्टी के अंकों को जल से धोया था। आश्रम में ऋषि सन्दीपनी, कृष्ण, बलराम व सुदामा की सुन्दर प्रतिमाएं हैं। वैष्णव मत के प्रर्वतक बल्लभाचार्य ने यहीं पर गीता का पारायण किया था। आश्रम में सैंकड़ों दुर्लभ कृष्णलीला की कला कृतियाँ देखने योग्य हैं।

गोपाल मन्दिर

उज्जयिनी के हृदय-स्थल पर अवस्थित गोपाल मंदिर काफी भव्य और विशाल है। इसे महारानी बायजाबाई सिंधिया ने कलियुगाब्द ४९४० तदनुसार ईस्वी सन् १८३८ ई. में निर्मित करवाया था। मंदिर में गोपाल कृष्ण की आकर्षक प्रतिमा प्रतिष्ठित है। प्रतिमा की ठोड़ी पर एक बहुमूल्य हीरा जड़ा हुआ है, जो दूर से ही श्रद्धालुओं को आकर्षित करता है। मंदिर में नित्य नैमेतिक पूजा-अर्चना, शृंगार, राजयोग, बालयोग आदि का प्रबन्ध सिंधिया ट्रस्ट द्वारा किया जाता है।

मंदिर का विशाल द्वार तथा अन्दर के किवाड़ चाँदी के पतरों से मढ़े हुए हैं तथा बाहर के किवाड़ भी चाँदी की चौखट से जड़े हैं। यहाँ जन्माष्टमी, गोवर्धनोत्सव पर देश के अनेक भागों के श्रद्धालु शोभा के दर्शन करने आते हैं।

शिप्रा नदी

उज्जयिनी में शिप्रा नदी का गंगा समान स्वरूप है। स्कन्दपुराण के अनुसार इस भूमण्डल पर शिप्रा के समान पवित्र नदी नहीं है। कथा प्रसिद्ध है कि भगवान शिव द्वारा त्रिशूल से विष्णुदेव की तर्जनी चक्रित करने से निकली रुधिर धारा से शिप्रा की उत्पत्ति हुई है। यह पवित्र नदी महाकालेश्वर, हरसिद्धि मंदिर के निकट प्रवाहित होती है। नदी के दोनों ओर सुन्दर तथा कलात्मक घाट बने हैं, जिन पर अनेक देव मंदिर हैं। यहाँ का कार्तिक एवं वैशाख माह का स्नान धार्मिक महत्व का है। प्रति बारहवें वर्ष इसी नदी के तट पर सिंहस्थ कुम्भ पर्व का आयोजन होता है, जिसकी शोभा भव्यता लिये होती है।

उज्जयिनी में इनके अतिरिक्त अनेक अन्य धार्मिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक स्थल हैं, जिनमें विक्रमादित्य का टीला, बड़े गणेश, चारधाम मंदिर एवं वेधशाला, विक्रमकीर्ति मंदिर, लोकमान्य तिलक सांस्कृतिक अन्वेषण न्यास, वाकणकर शोध संस्थान आदि प्रमुख हैं।

उज्जयिनी पहुँचने हेतु सबसे निकटतम हवाई अड्डा इन्दौर है। दिल्ली, मुम्बई से रेल सेवा द्वारा उज्जयिनी जंक्शन जुड़ा है। यहाँ काफी संख्या में मध्यम व उच्च स्तर के होटल भी हैं, जहाँ ठहरने की उत्तम व्यवस्था है।

जैकी स्टुडियो, १३ मंगलपुरा स्ट्रीट,
झालाबाड़ – ३२६००१ (राजस्थान)

यात्रा वृत्त

किन्नर कैलाश दर्शन

बीरबल शर्मा

हिमाचल प्रदेश के पर्वत शिखरों पर खड़ी अद्‌भुत शिलाओं को जनमानस शिव कैलाशों के रूप में मानता है। धार्मिक आस्था के प्रतीक इन कैलाशों की कठिन व जोखिम भरी यात्रा के लिए हर साल हजारों लोग जाते हैं। १९९९ में श्रीखंड की यात्रा के लिए जुलाई महीने में जब हमारा मण्डी-कुल्लू के सहयात्रियों का दल बागी पुल-जाओ सिंहगाड़ होकर निकला तो लगातार बारिश से डंडाधार की चढ़ाई से आगे नहीं जा सका और वापस लौट गया। 'हिमाचल दर्शन' के उद्देश्य से प्रदेश के ऊँचे शिखरों पर धार्मिक व जन आस्थाओं से जुड़े स्थलों की अब तक मेरी ५० यात्राओं में पहली बार ऐसा हुआ था कि बिना लक्ष्य तक पहुंचे वापस लौटना पड़ा। फिर एक साल का विराम देकर अपने को शारीरिक तौर पर और अधिक सबल बनाकर हमारे दल ने अगले ही साल यानि २००१ के जुलाई मास में श्रीखण्ड की यात्रा की। उसी यात्रा में मैंने निश्चय किया कि अगस्त २००२ में हमारा दल किन्नौर के शिखर किन्नर कैलाश जो अब हिमाचल दर्शन के महत्त्व का मेरी सूची के अनुसार अंतिम शिखर था, की यात्रा की जाएगी।

इसी लक्ष्य को अंतिम रूप देने के लिए इस बार मैंने जुलाई महीने में ही यात्रा का कार्यक्रम व हिम्मत जुटा सकने वाले साथियों के बारे योजना बनानी आरंभ की। थोड़ा-बहुत आगे पीछे होते रहे कार्यक्रम के बावजूद हमारा १० सदस्यीय दल जिसमें अधिकांश नए घुम्मकड़ थे, २२ अगस्त की सुबह एक गाड़ी में मंडी से रिकांगपियो के लिए रवाना हो गया। रिकांगपियो में किन्नौर के लोक सम्पर्क एवं जनसूचना अधिकारी आर०एस० नेगी से पहले सम्पर्क हो चुका था। जिससे उन्होंने हमारे ठहराव व साथ ले जाने के लिए तीन गाइड एवं कुलियों की व्यवस्था कर दी थी। दल के सभी सदस्यों के लिए किन्नर कैलाश की यह पहली यात्रा थी। सभी रास्ते से अनभिज्ञ थे, जो भी जानकारी प्राप्त हुई थी, उसी को ध्यान में रखते हुए व्यवस्था करके हमारा दल २३ अगस्त को सुबह हिन्दुस्तान-तिब्बत मार्ग या कहें कि अंबाला-कौरिक राष्ट्रीय मार्ग २२ पर शिमला से २१५ कि.मी. दूर तथा रिकांगपियो से मात्र ७ किलोमीटर की दूरी पर नीचे पोवारी में सतलुज के किनारे पहुंच गया था। यहां से गरारी (झूले) के जरिए पार होना था। उफनती सतलुज के ऊपर से एक-एक, दो-दो करके झूला पार किया।

कुछ सदस्यों के लिए यह एक दिल दहला देने वाला रोमांचकारी अनुभव था। पैदल यात्रा का पहला कदम अब सतलुज के इस पार से शुरू होना था। इसी बीच गांव तंगलिंग के बागवान,

किसान, महिलाएँ, पुरुष, बच्चे, लगातार सेब, टमाटर, अंगूर तथा अन्य उत्पादन किल्टे, टोकरियों में भर कर झूले से आर पार हो रहे थे। इससे पहले कि यात्रा का वृतांत आरम्भ हो, दल के सदस्यों का परिचय करवा दूं। सवयंसेवी संस्था पुरातत्व चेतना संघ जिसके तत्त्वावधान में मंडी 'हिमाचल दर्शन' फोटो गैलरी स्थापित है, के बैनर तले हमारी यह यात्रा हो रही थी। इसमें बीरबल शर्मा (लेखक), हिन्दुस्तान टाईम्स के मण्डी स्थित संवाददाता धर्म प्रकाश गुप्ता, आई.बी. के. सेवानिवृत्त अधिकारी एम.एस. जमवाल, अतिरिक्त सहायक अभियंता हिमाचल प्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड (धर्मपुर, मंडी), प्रताप सिंह ठाकुर जे.बी.टी. अध्यापक बलद्वाड़ा, नगरोटा शशि शर्मा, ग्रामीण बैंक कर्मी आर.के. मंडयाल, व्यवसायी युगल किशोर शर्मा 'काकु' विजय कुमार, छात्र पीयूष पंडित तथा छात्र नरेश शर्मा थे। दल में १९ वर्ष से लेकर ५६ वर्ष आयु तक के सदस्यों का समावेश था।

दल को पोवारी (५००० फुट) से १९,००० फुट पर स्थित कैलाश तक जाना था। सेबों से लदे बागीचों, अंगूरों की बेलों, प्राचीन शैली के घरों के गांव तंगलिंग के बीच से गुजरते हुए पहले ही खड़ी चढ़ाई शुरू हो जाती है। लाल सुर्ख सेवों की तांक-झांक करते हुए कुछ सेब जैसे-तैसे प्राप्त करके आगे बढ़ते हुए पसीना-पसीना होकर भी हमारा दल एक अनूठी उम्मीद से आगे बढ़ रहा था। लगभग डेढ़ घंटे बाद जब एक नाले के पास पहुंचे तो यकायक हमारे गाईड बीर बहादुर ने अलर्ट कर दिया कि पीने का पानी यहीं से ले लो आगे पानी रात तक नहीं मिलेगा। यह सूचना चौंकाने वाली थी, फिर भी जिसके पास जो भी बोलत आदि थी उसे भरकर आगे कदम बढ़ाया। सीधी खड़ी चढ़ाई देवदार, चिलगोजा के पेड़, सूखते होंठ, फूलता दम, मगर रास्ता साफ व चौड़ा, बस चढ़ते रहो। धीरे-धीरे ऐसे लगता कि ये सब नीचे रहते जा रहे हैं और हम ऊपर आसमान को छूने की ओर बढ़ रहे हैं।

दोपहर के २ बजे तक चढ़ाई की जद्दोजहद के बीच घने जंगल खत्म हो गए और लगा कि अब यात्रा का वनस्पति विहीन क्षेत्र शुरू होने वाला है। भूख ने भी सताना शुरू कर दिया था। एक साथी आर.के.मंडयाल के बहुत आगे निकल जाने पर भी तय यही हुआ कि जो भी खाना है यहीं खा लिया जाए। सबने ब्रेड, पराठा, नींबू आदि के मिश्रण भरा भोजन किया और गाईड ने संकेत दिया कि अभी रास्ता आधा हुआ, तब फिर कमर कसी। कुछ ही देर में बड़े पेड़ खत्म हो गए तथा लंबी-चौड़ी चरागाहों जैसा रास्ता चल पड़ा। चढ़ाई जारी, ऑक्सीजन की कमी ने ज्यादा दम फुलाना शुरू किया। दूर-दूर कहीं भेड़ पालकों के डेरे नजर आते मगर पानी की बूंद नहीं। घंटों इसी तरह चढ़ते रहने के बाद एक खतरनाक घाटी से होकर गुजरना पड़ा। ऊपर-नीचे रास्ता संकरा, मीलों नीचे तक गहरी ढांक, सर्दी भी तेज हवा के साथ लगने लगी थी, कोहरा भी इतना छा गया कि दो-दो, तीन-तीन के ग्रुप में चल रहे सदस्यों को एक दूसरा नजर न आए। मगर इतना आभास जरूर लग रहा था कि कहीं हम एक नाले की ओर बढ़ रहे थे। हमारे गाईड बहुत आगे अगले

इंतजाम के लिए बढ़ गए थे।

दो साथी जमवाल व प्रताप के काफी पीछे छूट जाने से अगले साथियों को भी रुक-रुककर चलना पड़ रहा था। यकायक धुंध छटी और दूर नाले के किनारे नजर आए कुछ साथी। यहीं हमारा पड़ाव था। जहां खाना बनाकर गुफा की ओर बढ़ने की योजना थी। एक-एक करके हम सभी अंधेरा होने से पहले शाम सात बजे नाले के पास पहुंच चुके थे। बहादुर ने चाय बना दी थी, चाय देते हुए उसने ऊपर एक विशाल चट्टान की ओर इशारा किया कि यहीं रात को ठहरना है। जैसे तैसे चावल पके, अंधेरे में ही इन्हें पेट में उतारकर रात लगभग १० बजे डुआर (चट्टानीय गुफा) पहुंच गए। अपने-अपने हिसाब से बिस्तर बिछाकर लेट गए। आधी रात को बारिश शुरू हो गई। गुफा के एक हिस्से में पानी भर गया। वहां से उठना पड़ा और दूसरे हिस्से में डेरा जमा। बारिश जारी रहीं सुबह ६ बजे आगे बढ़ने का समय रखा था मगर तय हुआ कि बारिश थमते ही चलें। खाना बनाने में बहुत समय लगेगा, ऐसा मानकर चाय से ही गुजारा करके सवा सात बजे किन्नर कैलाश दर्शन के लिए आगे बढ़ गए। फिर सीधी चढ़ाई दम तोड़।

अब हम समुद्र तल से काफी ऊपर चल रहे थे। कदम-कदम पर सांस फूलता मगर दर्शन की लालसा आगे बढ़ने को मजबूर करती। इसी बीच जमवाल व प्रताप ने ऐलान कर दिया कि वे और नहीं चढ़ पाएंगे तथा वापस लौट जाएंगे, लेकिन बाद में हिम्मत धरकर साथ हो चले। चार घंटे के बाद दल बड़ी-बड़ी शिलाओं के बीच स्थित एक सरोवर पार्वती कुंड पर पहुंच चुके थे। कुंड के बीचों-बीच एक बड़े पत्थर पर लगी झंडियों के बीच पूजा स्थल। मान्यता है कि यहां पूजा अर्चना के बाद ही आगे बढ़ना होता है। इसी बीच बूंदा-बांदी शुरू हो गई। पूजा आदि की रस्म पूरी करके आसमान को छूती नंगी चोटियां, जिन पर बीती रात हुई बारिश ने नया बर्फ डाल दिया था, को ही कैलाश मानकर अगली चढ़ाई शुरू की। बूंदा-बांदी जारी रही। फिसलन व पत्थर गिरने से खतरा बरकरार। दो घंटे बाद हमारा दल एक जोत पर था। उड़ा देने वाली ठंडी हवा। जोत पर धुंध छंटी तो बहादुर ने दाईं ओर के एक शिखर की ओर इशारा किया, यही किन्नर कैलाश था। अब जोत से बाईं ओर को अन्तिम चढ़ाई मानकर चढ़ना शुरू किया। रास्ता कहीं चट्टान से नीचे तो कहीं ऊपर से। लाठियों के सहारे जमा देने वाली ठंडी हवा के बीच बूंदा-बांदी के चलते ही सवा एक बजे हमारा यात्री दल किन्नर कैलाश के अद्‌भुत दर्शन करके गद्‌गद था। मगर बारिश और गहरा घना कोहरा ऐसा कि कैमरे को खोलने की इजाजत न दे। कुछ लोग पूजा अर्चना में जुट गए। मैं ठंडी हवा और बूंदा-बांदी के बीच एक चट्टान पर बैठ गया, यह सोच कि जरा ही कोहरे की चादर हटे तो क्लिक करूं। एक घंटा इसी तरह बैठे-बैठे भीगते हुए बीत गया। सभी लौटने लगे। तभी जरा सी धुंध छंटी नजर आई। मैंने नरेश शर्मा से छाता कैमरे पर करने को कहा और एक के बाद एक करके क्लिक करता गया। प्रताप के हेंडिकेम (वीडियो) से भी जरा सा प्रयास किया, मगर अब और

इंतजार की हिम्मत नहीं बची थी, छाता भी हवा से टूट गया था, नीचे उतरने में ही गनीमत समझी। तब तक मैं और शशि ही पीछे बचे थे, हमारे साथ थे लोक बहादुर। एक घंटे उतराई में जब हम पार्वती कुंड पहुंचे तो यकायक मौसम साफ हो गया।

कैलाश पर भी धूप चमकी, मगर कुछ देर में फिर वही स्थिति बन गई। एक और दल स्थानीय युवाओं का कैलाश दर्शन के लिए पार्वती कुंड पर पहुंच चुका था। अंधेरा होने से पहले हम सब गुफा में पहुंच गए थे। देरी इस कारण हुई कि पत्थरों में रास्ता भटक गए। रात को गुफा में तीन दल इकट्ठे हो गए। जगह कम थी, कुछ तनातनी भी हुई, नाले में ज्यादा पानी आने से एक दल जिसे कहीं नींचे जाकर रुकना था, को भी यहीं रात काटनी पड़ी। थक कर चूर तथा लगभग अस्वस्थ से हो गए सदस्यों ने कुछ खा-पीकर रात काटी। सुबह मौसम तो ठहरा हुआ था मगर जब नौ बजे के आस-पास रवानगी हुई तो नाले में आई बाढ़ ने रोक लिया। बीच में तय हुआ कि नीचे नाले पर नजर आ रहे ग्लेशियर को पार करके चला जाए। ग्लेशियर तक उतरने में, उसे पार करने में ऊपर से तेज गति से गिरते पत्थरों ने जिस तरह के खौफ में दो घंटे हमें रोक कर रखा, इसे वर्णित करना मुश्किल है। यह सब झेलने के बाद उतरते हुए शाम साढ़े पांच बजे दल के सभी लोग पोवारी में झूला पार करके हिन्दुस्तान तिब्बत मार्ग पर खड़े थे।

मन में तंगलिंग के खट्टे मीठे अंगूरों का स्वाद भी ताजा था। गाड़ी ने परेशान किया तो रात फिर रिकांगपियो में कटी, छितकुल जाने का विचार था तो बीती रात हुई बारिश ने सांगला का पुल बहा दिया। सांगला की खूबसूरती को आंखों में कैद करके लौटे और २६ अगस्त की आधी रात को मंडी में यात्रा पूरी हो चुकी थी। इस यात्रा के लिए सबसे उत्तम समय १५ जुलाई, से १५ सितम्बर के बीच का ही माना जाता है। स्लीपिंग बैग, बरसाती, छाता, दर्द निवारक दवाईयां, चने, सूखे मेवे, पानी की बोतल, ग्लूकोज़, टोपी, मफलर, हंटर-शू, ट्रेकिंग सूट, रस्सी, मोमबत्ती, टार्च, दियासलाई जैसी चीजें साथ रहें तो असुविधा नहीं रहती है। सारी कठिनाइयां दूर हो जाती हैं जब 'किन्नर कैलाश' के दर्शन साक्षात् होते हैं। किन्नर कैलाश कहीं से सपाट और कहीं से नुकीली एक अनूठी शिला है। जिसकी ऊँचाई ७२ फीट बतलाई जाती है। किन्नर कैलाश के भव्य और दिव्य दर्शनों से अभिभूत व्यक्ति का मन बार-बार यहां पहुंचने की कामना करता है। तो फिर समय निकालें और किन्नर कैलाश के पुण्यदायी एवं रोमांचकारी दर्शन का कार्यक्रम बनाएँ।

अध्यक्ष,
पुरातत्त्व चेतना संघ,
बीरबल स्टुडियो, कॉलेज रोड,
मण्डी – १७५००१ (हि.प्र.)

स्वर्गीय ठाकुर राम सिंह जी का □□वां जन्म दिवस

फाल्गुन प्रविष्टे ४ कलियुगाब्द, ५११३, कृष्ण पक्ष ९/१०, ईस्वी सन् १६ फरवरी, २०१२ को ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान, नेरी जिला हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश) में शोध संस्थान के संस्थापक एवं राष्ट्रीय इतिहासवेत्ता स्वर्गीय ठाकुर राम सिंह जी का ९७वां जन्म दिवस समारोह आयोजित हुआ। इस अवसर पर देश के भिन्न-भिन्न स्थानों से पधारे विद्वानों तथा स्थानीय जनता ने श्रद्धेय ठाकुर राम सिंह जी को अपने श्रद्धासुमन अर्पित किए।

प्रो. प्रेम कुमार धूमल, मुख्यमंत्री, हिमाचल प्रदेश, समारोह के मुख्य अतिथि थे और भारत में मंगोलिया के पूर्व राजदूत ओ. नयामदवा समारोह में विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त समारोह में पूज्यपाद स्वामी महन्त सूर्यनाथ जी, शोध संस्थान के संरक्षक एवं मार्गदर्शक श्री चेत राम जी, प्रान्त संघ चालक कर्नल रूप चन्द जी, प्रान्त प्रचारक श्री वनवीर जी, पंजाब के पूर्व मंत्री डॉ. बलदेव चावला जी तथा भाषा एवं संस्कृति विभाग हिमाचल प्रदेश के निदेशक श्री राकेश कंवर जी का विशेष सान्निध्य प्राप्त हुआ।

प्रो. प्रेम कुमार धूमल ने अपने उद्‌बोधन में स्वर्गीय ठाकुर राम सिंह जी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा कि एक साधारण परिवार के किसान का बेटा पूरी लग्न से पढ़ाई लिखाई करता हुआ लाहौर के सुप्रसिद्ध एफ.सी. कॉलेज तक पहुंचा और वहां एम.ए. इतिहास की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उतीर्ण की। शिक्षा पूर्ण होने के साथ ही इन्होंने राष्ट्र सेवा का व्रत लिया और वे आजीवन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक रहे। तत्कालीन असम जैसे सुदूर पूर्वोत्तर राज्यों के दुर्गम क्षेत्रों में राष्ट्रीयता का गहन भाव व्याप्त किया। बाद में अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना का दायित्व मिलने पर सत्य पर आधारित इतिहास लेखन के ध्येय को राष्ट्रव्यापी प्रबलता प्रदान करने के लिए इनकी प्रेरणा सदा स्मरण रहेगी। हिमाचल प्रदेश को गर्व है कि ठाकुर राम सिंह जी का जन्म इस प्रदेश के जिला हमीरपुर के झण्डवीं गांव में हुआ, लेकिन वे समाज और राष्ट्र समर्पित कार्यों से पूरे राष्ट्र के गौरव बन गए। प्रो. धूमल ने कहा कि मैं यह पहली बार देख रहा हूँ ऐसे महान् व्यक्तित्व के जन्म दिवस पर विदेश से भी एक पूर्व राजनायिक पधारे हैं। इससे इतिहास नायक का यह जन्म दिवस भी एक इतिहास बन गया है।

भारत में रहे मंगोलिया के पूर्व राजदूत ओ.नयामदवा जी ने ठाकुर जी को श्रद्धांजली देते हुए कहा कि भारत मंगोलिया का सांस्कृतिक सहोदर है। यही सहोदर प्रेम उन्हें ठाकुर राम सिंह जी के जयन्ती समारोह में खींच लाया। उन्होंने कहा कि मंगोलिया में भारत को भगवान का देश कहा जाता है। भारत और मंगोलिया के पारम्परिक मधुर सम्बन्ध होने से मंगोलिया में एक स्ट्रीट के नाम महात्मा गांधी के नाम पर हैं। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के नाम पर वहां 'अटल

कम्युनिकेशन संस्थान' स्थापित किया गया है। उन्होंने भारत और मंगोलिया के ऐतिहासिक सम्बन्धों के अनुसंधान कार्यों को आगे बढ़ाना, दोनों के लिए उपयोगी बतलाया।

शोध संस्थान के संगठन मंत्री श्री प्रेम सिंह भरमौरिया ने कार्यक्रम में संस्थान की विविध गतिविधियों की जानकारी दी तथा संस्थान के केन्द्रीय समन्वयक श्री चेत राम ने कहा कि शोध संस्थान के पुस्तकालय में अनेक पुस्तकें संग्रहीत हैं जिससे अनेक शोधार्थी लाभान्वित हो रहे हैं। इस पुस्तकालय को समृद्ध बनाने में अनेक सुधी जनों का सहयोग रहा है। जिनमें दिल्ली के प्रतिष्ठित विद्वान स्वर्गीय डॉ. श्याम बहादुर वर्मा का योगदान अतुलनीय है। उन्होंने जीते जी जो इच्छा व्यक्त की थी, उसके अनुपालन में उनके छोटे भाई डॉ. धर्मेंद्र वर्मा ने उनके निजी पुस्तकालय की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें शोध संस्थान को उपलब्ध करवाकर अनुगृहीत किया है।

पुस्तकों का लोकार्पण :

इस समारोह में मुख्यमंत्री महोदय ने शोध संस्थान के वैचारिक पक्ष के निदेशक एवं इतिहास दिवाकर के सम्पादक (सेवानिवृत्त उपनिदेशक, भाषा-संस्कृतिक विभाग) डॉ. विद्या चन्द ठाकुर द्वारा सम्पादित पुस्तक ***हिमाचल प्रदेश के स्थान नाम– व्युत्पत्तिजन्य विवेचनात्मक अध्ययन*** तथा शोध संस्थान के लेखक प्रमुख संस्कृत प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय, अर्की डॉ. ओम प्रकाश शर्मा द्वारा लिखित संस्कृत प्रभावित ***महासुवी एवं सिरमौरी लोक गाथाएं*** पुस्तक का लोकार्पण किया। दोनों लेखकों को भाषा एवं संस्कृति विभाग की ओर से प्रो. प्रेम कुमार धूमल के कर कमलों द्वारा शाल, टोपी पहनाकर सम्मानित किया गया और प्रो. धूमल ने कहा कि दोनों लेखक भारतीय इतिहास और संस्कृति के क्षेत्र में समर्पण भाव से कार्य कर रहे हैं और शोध संस्थान के शोधात्मक कार्य में इनकी विशेष भूमिका है। उल्लेखनीय है कि हिमाचल प्रदेश के स्थान नामक पुस्तक भाषा एवं संस्कृति विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा भाषायी एवं सांस्कृतिक सर्वेक्षण योजना के अन्तर्गत प्रकाशित है। डॉ. ओम प्रकाश शर्मा के पुस्तक के प्रकाशक सत्यम् पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली है।

हिमाचल प्रदेश के स्थान नाम पुस्तक की विषय वस्तु पर जानकारी देते हुए डॉ. विद्या चन्द ठाकुर जी ने बताया कि सृष्टि में कोई भी तत्त्व था वस्तु बिना नाम के नहीं होते। इस पुस्तक में हिमाचल प्रदेश के स्थान नामों के नामकरण की व्युत्पत्ति की दृष्टि से १५०० स्थानों की विशिष्टताओं का विवेचन किया गया है। यह विवेचन विषय अनुसार वर्गीकृत करके अलग–अलग अध्यायों में विभक्त है। जिसमें हिमाचल प्रदेश की समृद्ध संस्कृति, इतिहास, भूगोल और लोक जीवन के विविध पहलू व्यापकता से प्रकाश में आए हैं। पुस्तक में सांस्कृतिक परम्परा से जुड़े मनाली, वशिष्ट, कन्याल, चामुण्डा, रेणुका, तारा देवी, अवाह देवी, चण्डी, भरमौती, पराशर झील, मणिकर्ण, मणिमहेश, बिलासपुर, पांवटा साहिब, किन्नर कैलाश, त्रिलोकनाथ आदि सैकड़ों स्थान नामों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि हिन्दू संस्कृति इस देश की पहचान है जो यहां की राष्ट्रीय एकात्मता की अटूट शक्ति है। इस सम्बन्ध में विदेशी मूल की महान् भारतविद् श्रीमती एनीवीसेंट के विचार उल्लेखनीय हैं – ''विश्व के महान् धर्मों एवं पंथों के

अपने चालीस वर्षों से अधिक के अध्ययन के आधार पर मैं कह सकती हूँ कि मुझे हिन्दू धर्म जितना सम्पूर्ण, विज्ञान सम्भत, दार्शनिक और आध्यात्मिक दिखा, उतना कोई दूसरा धर्म नही दिखा। जितना अधिक आप इसे जानते हैं, उतना ही अधिक आप इससे प्यार करने लगते हैं और जितना अधिक आप इसे समझते हैं, उतना ही अधिक आप इसका महत्त्व समझने लगते हैं। इस विषय में कोई सन्देह नहीं होना चाहिए कि बिना हिन्दुत्व के भारत वर्ष का कोई भविष्य नहीं है। हिन्दुत्व ही वह मिट्टी है जिससे भारत की जड़ें गहरी जमी हुई हैं और यदि इसे यहां की भूमि से उखाड़ा गया तो भारत वैसे ही सूख जाएगा, जैसे कोई वृक्ष भूमि से उखड़ने पर सूख जाता है। एक बार हिन्दुत्व को हटा दीजिए तो उसके बाद भारत का क्या बचता है? भारत का इतिहास, इसका साहित्य, इसकी कला, इसके स्मारक, सब में हिन्दुत्व अद्योपान्त भरा पड़ा है। भारत और हिन्दुत्व एक ही हैं।'' डॉ. विद्या चन्द जी ने कहा कि कोई भी कार्य अन्तिम नहीं होता, प्रत्येक कार्य में सदैव सुधार और वृद्धि की आवश्यकता रहती है। अत: सुधी पाठकों के जो भी सुझाव प्राप्त होंगे, उसके अनुसार भविष्य में सुधार किया जाएगा और कार्य को आगे बढ़ाया जाएगा।

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा जी ने अपनी पुस्तक संस्कृत प्रभावित महासुवी और सिरमौरी लोक गाथाएँ पुस्तक का परिचय देते हुए कहा कि मैंने जो यह कार्य किया है, इसके पीछे स्वर्गीय ठाकुर राम सिंह जी की प्रेरणा रही है। उनका मार्गदर्शन हमें आज सारा काम करने में सक्षम कर गया है। लोक गाथाओं में छिपा इतिहास समाज के सामने आए, यह मेरा उद्देश्य रहा है। मेरा बाल्यकाल शिमला जिला की चौपाल तहसील के जगराह गांव में ऐसे वातावरण में व्यतीत हुआ जहां हमारे कुल देवता महाराज डकरेई के उत्सवों और पूजा सिद्धान्तों पर निरन्तर चर्चा हुआ करती थी। सौभाग्य से मेरी उच्च शिक्षा संस्कृत भाषा और साहित्य में हुई। इसका परिणाम यह हुआ कि बाल्यकाल में सुनी गई गाथाओं और कथानकों के तथ्य वैदिक और लौकिक संस्कृत साहित्य में एक-एक करके अध्ययन के विषय बनते गए। इस अध्ययन से एक तथ्य स्पष्टता से निश्चित हुआ कि जो लोग लोक को शास्त्र से अलग करके देखते हैं, ऐसा उनसे सही दृष्टि के अभाव में होता है। वास्तव में लोक में सब कुछ वही प्रचलित है जिसकी मूल धारा ऋषि-मुनियों द्वारा परिपोषित है और जिसका विवेचन वेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि संस्कृत के शास्त्र ग्रन्थों में विद्यमान है। इस पुस्तक में महासू और सिरमौर क्षेत्र की लोक गाथाएँ दी गई हैं। जिनमें सृष्टि रचना, रामायण, महाभारत, दशावतार, बलिराज, शिवपुराण के विविध प्रसंग सम्मिलित हैं। इन गाथाओं में अनेक आंचलिक संदर्भों का समावेश है, लेकिन मूल कथानक शास्त्रीय ऋषि परम्परा से अनुप्राणित है। इस प्रकार का आंचलिक अध्ययन यदि देश भर में व्यापक रूप में होता है तो इससे भारतवर्ष की सनातन परम्परा का अद्‌भुत समन्वय उभरकर सामने आएगा और इससे एक राष्ट्र, एक जन, एक संस्कृति का दैविक पथ आलोकित होगा।

सर्व शिक्षा अभियान हिमाचल प्रदेश

गुणात्मक शिक्षा के लिए प्रयास

- प्रवासी एवं घुमन्तू बच्चों के लिए गैर आवासीय ब्रिज कोर्स/ मोबाइल स्कूल की व्यवस्था।
- 9 ज़िलों के 24 गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से अक्षम बच्चों के लिए 'गृह आधारित शिक्षा'।
- 'बाला फीचर'(BaLA) से बने स्कूल भवन सुन्दर और अध्ययन में सहायक।
- स्कूलों में अतिरिक्त कमरों, चारदिवारी, पेयजल, शौचालय आदि की पर्याप्त व्यवस्था।
- प्रारम्भिक स्तर पर बालिकाओं की शिक्षा हेतु 8 खण्डों में राष्ट्रीय कार्यक्रम (NPEGEL)
- अंग्रेजी विषय की शिक्षा पहली कक्षा से आरम्भ।
- पिछड़े खण्डों में बालिकाओं के लिए 10 कस्तूरबा गांधी आवासीय स्कूल (KGBV)
- प्रारम्भिक स्तर तक बच्चों के लिए निःशुल्क पाठ्य-पुस्तकें।
- बालिकाओं को आत्म निर्भर बनाने के लिए जीवनोपयोगी शिक्षा, योग एवं कराटे प्रशिक्षण।
- प्राथमिक स्तर के बच्चों में अंग्रेजी, हिन्दी भाषा व गणितीय उपलब्धि स्तर सुधारने हेतु 'आधार कार्यक्रम'।
- प्रारम्भिक स्तर के बच्चों का अंग्रेजी, विज्ञान व गणितीय उपलब्धि स्तर सुधारने हेतु 'संवृद्धि कार्यक्रम'।
- बच्चों की पठन क्षमता बढ़ाने के लिए 'रीडिंग रूम' पुस्तकालय कार्यक्रम।
- बच्चों की रचनात्मक प्रतिभा को उभारने के लिए 'अक्कड़-बक्कड़' मासिक पत्रिका का प्रकाशन ।
- स्कूलों को सूचना प्रौद्योगिकी से जोड़ने हेतु 602 स्कूलों में 'कम्प्यूटर शिक्षा' कार्यक्रम।
- बच्चों के कोमल मन से परीक्षा का भय दूर करने तथा उनके सर्वांगीण विकास के लिए पहली से आठवीं कक्षा तक सतत समग्र मूल्यांकन शुरू।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 के तहत सभी स्कूलों में शैक्षिक गतिविधियों के सफल संचालन के लिए स्कूल प्रबंधन समितियों का गठन।
- प्रदेश के सभी स्कूलों कक्षा 6-8 में योग एवं हिमाचली संस्कृति पाठ्यक्रम लागू।

शिक्षा का अधिकार
सर्व शिक्षा अभियान
सब पढ़ें सब बढ़ें

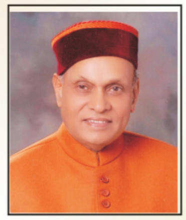

प्रो. प्रेम कुमार धूमल
माननीय मुख्यमंत्री

ईश्वर दास धीमान
माननीय शिक्षा मंत्री

वीरेन्द्र कंवर
मु.सं.स.शिक्षा एवं लो.नि.वि.

रोहित जम्वाल, हि.प्र.से.
राज्य परियोजना निदेशक
सर्व शिक्षा अभियान, हि.प्र.

राजीव शर्मा, हि.प्र.से.
मिशन निदेशक
सर्व शिक्षा अभियान, हि.प्र.

श्री के. संजय मूर्ति, भा.प्र.से.
अध्यक्ष
हिमाचल प्रदेश स्कूल शिक्षा समिति.
सर्व शिक्षा अभियान, हि.प्र.

ब्समसमइतंजपदह`पसअमत रनइपसमम ल्मंत

D.A.V. PUBLIC SCHOOL HAMIRPUR (H.P)

'An Institution for Academic Axcellence'

1. Highest number of selections in competitions for MEDICAL, ENGINEERING, NDA and NTSE.
2. Track record of Good/Very good results as per DAV CMC result analysis for the last 13 years.
3. 1st in State CBSE, AISSE - 2005
4. 1st in State Engineering - AIEEE 2006 and 2007.
5. 1st in HP - PMT 2007
6. 1st in State NTSE - 2007 Where 2 students out of total 5 from whole Himachal are from this school.
7. 1st in North Zone IIT (All India 17th Rank) 3 students selected in IIT - 2009.
8. Conferred the best school award by 'Himachal Kesri' (a leading newspaper) on 30th January, 2009 for its outstanding and exemplary contribution in the field of education.
9. State of the art kindergarten using and fun park.

विकास खण्ड ऊना, विकास की राह पर

मनरेगा में 2011–12 में प्रयास

1.	विकास खण्ड में कुल जॉब कार्ड	:	12825
2.	जिन लोगों को रोजगार दिया गया	:	2294
3.	कुल अर्जित कार्य दिवस	:	134052
4.	महिला कार्य दिवस	:	88292
5.	जिन लोगों के 100 दिन हुए	:	187
6.	कुल राशि व्यय की गई	:	214.92 लाख
7.	कुल कार्य जो पूर्ण हुए	:	127

विकास खण्ड ऊना की ग्राम पंचायतों के सभी 18 वर्ष से ऊपर के निवासियों से अनुरोध है कि वे अपना जॉब कार्ड बनवा कर योजना में कार्य करें व लाभ प्राप्त करें।

पंकज शर्मा
सहायक आयुक्त,
(विकास) एवं खण्ड विकास अधिकारी,
विकास खण्ड – ऊना, जिला ऊना।

बाबा बालक नाथ जी मन्दिर समूह तलाई जिला बिलासपुर (हि०प्र०)

भारतीय संस्कृति की विराठ पृष्ठ भूमि में विद्यमान दिव्य स्थलों में से भारत की सुप्रसिद्ध देवी–देवताओं व ऋषि–मुनियों की धरती कहे जाने वाले हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर जिले के घुमारवीं उपमण्डल में शाहतलाई (छाः) तलाई की पावन धरती पर बाबा बालक नाथ जी की तपोस्थली स्थित है। यह पावन स्थल शिमला से 135 कि.मी., रेलवे स्टेशन ऊना से 60 कि.मी. तथा हमीरपुर से 48 कि.मी. की दूरी पर स्थित है।

हिमाचल प्रदेश सार्वजनिक धार्मिक संस्थान एवं मूर्त विन्यास अधिनियम, 1984 के अन्तर्गत दिनांक 30 जून, 1993 से इस मन्दिर की प्रबन्धक व्यवस्था मन्दिर न्यास से संभाली है।

बाबा जी की पुरातन तपोस्थली वट वृक्ष मन्दिर, जहां बाबा जी ने अखण्ड तपस्या की थी, बाबा जी का धूना मन्दिर, जो निरन्तर चलता रहता है, मन्दिर लस्सी व रोटियां, जहां बाबा जी ने चिमटा गाड़कर 12 वर्ष की रोटियां व लस्सी दबाई थी, मन्दिर गुरना (गरना) झाड़ी जहां बाबा जी जी गऊएं चराते थे, तपोस्थली से लगभग 100 मीटर की दूरी पर स्थित है, आदि प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं। यहां प्रतिवर्ष लाखों श्रद्धालु देश–विदेश से इन पावन स्थलों के दर्शन करने आते हैं। मन्दिर न्यास ने श्रद्धालुओं/यात्रियों की सुविधाओं व सेवाओं के लिए बड़े पैमाने पर विकास कार्य करवाये हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है :–

1) मन्दिर परिसर में संगमरमर पत्थर लगवाना। 2) मन्दिर वटवृक्ष तपोस्थली का निर्माण। 3) मन्दिर परिसर में रेलिंग का कार्य। 4) मन्दिर परिसर में पेयजल व्यवस्था। 5) मन्दिर परिसर का विद्युतीकरण। 6) जूतों को रखने के स्थान का निर्माण कार्य। 7) शौचालयों/मूत्रालयों का निर्माण। 8) मन्दिर न्यास द्वारा तलाई क्षेत्र में तीन हैंडपम्प लगवाना। 9) मन्दिर गुरना झाड़ी में संगमरमर तथा परिसर में नीला पत्थर (तलाई स्टोन) कार्य। 10) मन्दिर न्यास द्वारा लंगर भवन, सराये का निर्माण किया गया, जिस पर 34 लाख रूपये व्यय किये गये हैं। 11) मन्दिर व तलाई बाजार में पौधा रोपण करवाया गया। 12) तलाई चौक में हाईमास्ट लाईट लगवाई गई। 13) प्रशासनिक ब्लाक का निर्माण। 14) तलाई बाजार में सड़क मुरम्मत कार्य करवाना। 15) मन्दिर न्यास में सी.सी.टी.वी. की स्थापना। 16) तलाई बाजार में श्रद्धालुओं के लिए बैंचों की सुविधा।

प्रस्तावित कार्य	**अनुमानित खर्चा**
1. मन्दिर के लिए तैयार की गई मास्टर प्लान के अनुसार विकासात्मक कार्य	1,27,00,000–00
2. सरायं का जीर्णोद्धार	7,26,732–00

उपरोक्त निर्माण कार्य में आर्थिक सहयोग (दान) देकर पुण्य के भागीदार बनें तथा बाबा जी का आशीर्वाद तथा आत्मिक सुख प्राप्त करें।

श्री राम कुमार गौतम (एच०ए०एस०)
अध्यक्ष (एस०डी०एम०)
मन्दिर न्यास बाबा बालक नाथ जी
शाहतलाई, जिला बिलासपुर (हि.प्र.)

रितेश चौहान (आई०ए०एस०)
आयुक्त (उपायुक्त)
मन्दिर न्यास बाबा बालक नाथ जी
शाहतलाई, जिला बिलासपुर (हि.प्र.)